अध्याय – 2

भौतिक भूविज्ञान एवं भू आकृति विज्ञान
(Physical Geology and Geomorphology)

सौर मंडल

मानव को सौर मंडल के अस्तित्व को समझने में हजारों वर्ष लगे। पूर्व में विचारधारा रही कि पृथ्वी ब्रह्माण्ड का स्थिर केन्द्र है अर्थात "भूकेन्द्रीय" (Geocentric) विचारधारा प्रचलन में रही। ईस्वी सन् 950 में भारतीय गणितज्ञ आर्यभट्ट ने "सूर्य केन्द्रीय" (Heliocentric) विचारधारा को जन्म दिया परन्तु इस सिद्धांत के प्रतिपादन का श्रेय सन् 1490 में कोपरनिकस को मिला। सन् 1609 में गेलिलीयो ने दूरबीन (Telescope) का अविष्कार किया व "सूर्य केन्द्रीय" सिद्धांत को प्रमाणित किया। इस सिद्धांत के अनुसार सौर मंडल के केन्द्र में सूर्य स्थित है तथा जिसके चारों ओर सौर मंडल के अन्य सभी सदस्य परिक्रमा करते हैं।

सौर मंडल में सूर्य और अन्य खगोलीय पिंड शामिल है जो इस मंडल में एक दूसरे से गुरूत्वाकर्षण बल द्वारा बंधे हुए हैं। सूर्य एक विशाल तारा है तथा इसके चारों ओर परिक्रमा करते अपेक्षाकृत छोटे आकार के आठ ग्रहों, बौने ग्रहों, प्राकृतिक उपग्रहों, क्षुद्रग्रहों, उल्काएं, धूमकेतुओं और खगोलीय धूल के समूह को ग्रहीय मण्डल कहते हैं। सूर्य व उसके ग्रहीय मण्डल से मिलकर ही सौर मण्डल बना है। इसके केन्द्र में सूर्य है और सबसे बाहरी सीमा पर वरूण ग्रह (Neptune) है। वरूण से परे यम (Pluto) बौने ग्रहों के अलावा धूमकेतू (Comets) विद्यमान है। सूर्य जी–2 (G-2) श्रेणी का मुख्य अनुक्रम तारा है तथा प्रति सैकण्ड 60 करोड़ टन हाइड्रोजन को संलयित करके हीलियम बना देता है जिससे ऊर्जा का निर्माण होता है। सूर्य हमारे सौर मण्डल का सर्वाधिक बड़ा पिण्ड है जिसमें सौर मंडल का 99.86 फीसदी द्रव्यमान निहित है। सूर्य का व्यास लगभग 13 लाख 90 हजार किलोमीटर है, यह हमारी पृथ्वी से लगभग 109 गुना अधिक है।

सौर मंडल में सूर्य से उनकी दूरी के क्रम में आठ ग्रह है: बुध (Mercury), शुक्र (Venus), पृथ्वी (Earth), मंगल (Mars), बृहस्पति (Jupiter), शनि (Saturn), अरूण या वारूणी (Uranus) तथा वरूण (Neptune)।

बुध सौर मंडल का सूर्य से सर्वाधिक निकट स्थित तथा आकार में सबसे छोटा ग्रह है। यह सूर्य की एक परिक्रमा 88 दिन में करता है। **शुक्र** सूर्य से दूसरा ग्रह है तथा इसका घूर्णन काल 225 दिन का है। शुक्र का आकार व बनावट लगभग पृथ्वी जैसी होने के कारण इसे पृथ्वी की बहन कहा जाता है। **पृथ्वी** सूर्य से तीसरा ग्रह है तथा एकमात्र ग्रह है जिस पर जीवन मौजूद है। सूर्य से पृथ्वी की औसत दूरी लगभग 15 करोड़ किलोमीटर है जिसे एक खगोलीय इकाई या एकक (Astronomical Unit) कहते हैं। पृथ्वी को 'नीला ग्रह' भी कहते हैं। सौर मंडल में सूर्य से चौथा ग्रह **मंगल** है, इसकी आभा 'रक्तिम' होने के कारण इसे 'लाल ग्रह' भी कहा जाता है। मंगल ग्रह पर हमारे सौर मंडल का सर्वाधिक ऊंचा पर्वत "**ओलम्पस मोन्स**" (लेटिन माउण्ट ओलम्पस) करीब 22 किलोमीटर ऊंचाई का है जो पृथ्वी पर मौजूद सर्वाधिक ऊंचाई वाले पर्वत माउंट एवरेस्ट (ऊंचाई 8848 मीटर) से लगभग तीन गुना जितना ऊंचा है। मंगल ग्रह पर जीवन और पानी होने की संभावनाएं व्यक्त की जाती रही है तथा इसकी पुष्टि को लेकर चुनौतीपूर्ण शोध कार्य जारी है। मंगल के दो उपग्रह फोबास और डेमास है। बुध, शुक्र पृथ्वी व मंगल सौरमंडल में सूर्य से दूरी के आधार पर निकटतम व कनिष्ठ सदस्य है वही दूसरी ओर बृहस्पति, शनि, अरूण व वरूण दूरस्थ व वरिष्ठ सदस्य है। जमीन युक्त ग्रह स्थलीय ग्रह कहलाते है वहीं अधिकतर गैस युक्त ग्रह यथा बृहस्पति, शनि, अरूण व वरूण गैसीय ग्रह कहलाते हैं।

बृहस्पति सूर्य से पांचवां और सौर मंडल का सर्वाधिक बड़ा ग्रह है जिसका द्रव्यमान सौर मंडल के अन्य सात ग्रहों के कुल द्रव्यमान का ढ़ाई गुना है, इसके 12 उपग्रह है। शनि बृहस्पति के बाद दूसरा सबसे बड़ा उपग्रह है तथा इसके 60 से अधिक

उपग्रह है जिनमें सबसे बड़ा उपग्रह टाइटन है जो आकार में बुध ग्रह से भी बड़ा है। **अरूण** सौर मंडल का तीसरा सबसे बड़ा ग्रह है, ये पृथ्वी के आकार से 63 गुना अधिक बड़ा है परन्तु गैसीय ग्रह होने के कारण विशालकाय होने के बावजूद पृथ्वी से 14.5 गुना ही अधिक भारी है, इसके 5 उपग्रह हैं। **वरूण** हमारे सौर मंडल में सूर्य से आठवाँ ग्रह है, पृथ्वी के मुकाबले ये सूर्य से लगभग तीस गुना अधिक दूरी पर है। इसके 2 उपग्रह है। सभी ग्रहों का परिक्रमण पथ दीर्घवृत्ताकार है। यम को बौने ग्रह के रूप में वर्गीकृत किया जाने लगा है। सौर मंडल में मंगल तथा बृहस्पति ग्रहों के बीच क्षुद्र ग्रह घेरा (Asteroid Belt) क्षेत्र है जिसमें हजारों क्षुद्रग्रह है जो सूर्य की परिक्रमा कर रहे हैं (चित्र 2.1)। इनमें सेरेस, पालास, जूनो, वेस्टा तथा एस्ट्रीया की खोज 19वीं सदी में की गई। सौर मंडल में प्रचुर मात्रा में छोटे आकार के पिण्ड है जो पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण से तीव्र वेग से वायुमंडल में प्रविष्ठ करते हैं तथा घर्षण के फलस्वरूप प्रज्वलित हो जलकर विलिन हो जाते हैं एवं रात्रि में चमकते टूटते तारे की तरह दिखाई पड़ते हैं, इन्हें उल्का (Meteor) कहते हैं। कुछ बड़े पिण्ड पृथ्वी की धरातल पर प्रज्वलित अवस्था में आकर गिरते हैं, उल्कापिण्ड (Meteorite) कहलाते हैं। सौर मंडल में पत्थर, बर्फ, नीहारिका, गैस एवं धूल कणों के पुंज के रूप में अनेक धूमकेतू (Comets) हैं जो अतिदीर्घवृत्तीय परिक्रमण पथ में सूर्य की परिक्रमा करते हैं। इनके चमकीले अग्र भाग को 'कोमा', मध्य भाग को 'नाभि या केन्द्रक' तथा पश्च भाग को 'पूंछ' कहते हैं। हैली, शूमेकर–लेवी 9, हेल–बॉप, डोनाटी, डेनियल तथा पेल्टियर कुछ प्रसिद्ध धूमकेतू है। शूमेकर–लेवी 9 वर्ष 1994 के जुलाई माह में बृहस्पति से टकराकर नष्ट हो गया था।

पृथ्वी की उत्पत्ति

सौर मंडल के विभिन्न सदस्यों के आंतरिक सम्बन्ध एवं इनके गुणधर्मों में सामंजस्य इसकी एकरूपता को प्रमाणित करते है, अतः पृथ्वी की उत्पत्ति को समझने में सौर मंडल की उत्पत्ति के प्रक्रम का समुचित समाधान खोजना होगा। सौर मंडल की उत्पत्ति के संबंध में दो विचारधाराओं यथा एकरूपतावादी या एकजनकीय परिकल्पनाओं तथा प्रलयवादी या द्विजनकीय परिकल्पनाओं में बांटा गया है। एकरूपतावादी परिकल्पनाओं में विकासवादी सिद्धांत के आधार पर एक ही प्रक्रम के अनुसार सौर मंडल की उत्पत्ति क्रमागत विकास के फलस्वरूप मानी गई है वहीं दूसरी ओर प्रलयवादी परिकल्पनाओं में सौर मंडल की उत्पत्ति अन्तरिक्ष में घटित प्रलयकारी घटना के कारण मानी गई है।

एकरूपतावादी परिकल्पनाएँ

काण्ट एवं लाप्लास की नीहारिका परिकल्पना– काण्ट (1775) तथा लाप्लास (1796) ने सौर मंडल की उत्पत्ति को समझाने के लिए नीहारिका परिकल्पना प्रस्तुत की। उन्होनें

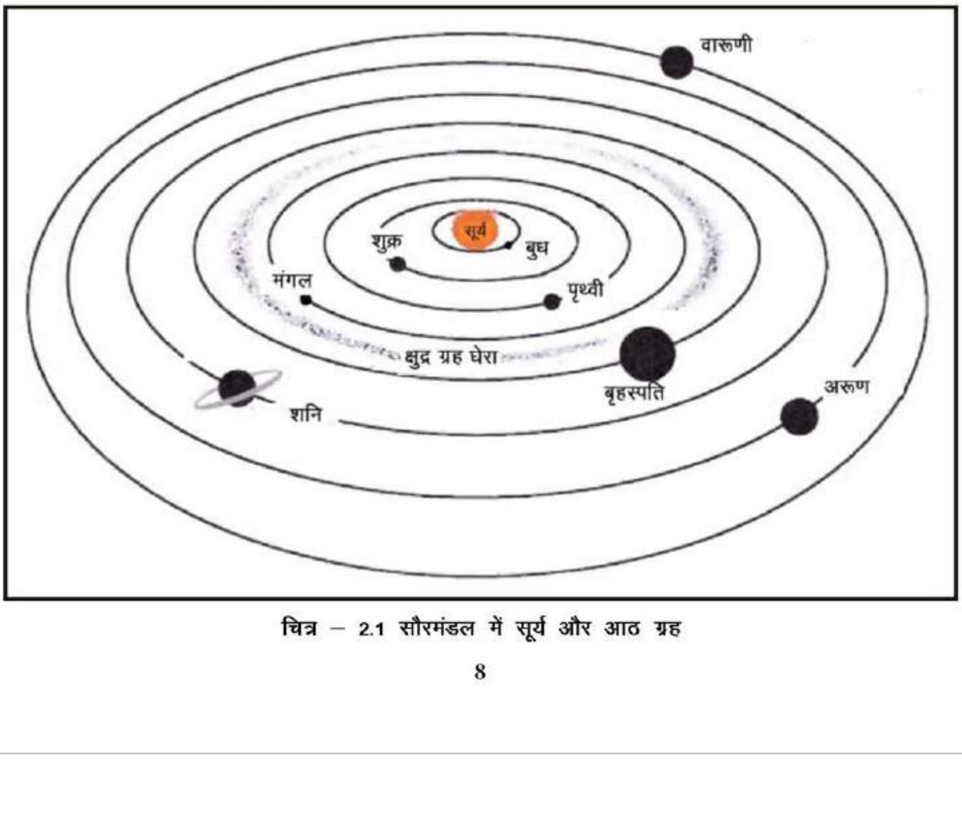

चित्र – 2.1 सौरमंडल में सूर्य और आठ ग्रह

अंतरिक्ष में घने गैसीय पदार्थों के पिंड के रूप में एक विशाल नीहारिका की कल्पना की, जिसे आद्य सूर्य माना गया। लाप्लास के अनुसार नीहारिका अपने अक्ष पर घूर्णनशील थी। परिकल्पना के अनुसार सामान्य गुरूत्वाकर्षण के प्रभाव से घूर्णनशील नीहारिका में क्रमशः संकुचन के कारण आयतन में कमी होने के फलस्वरूप इसके घूर्णन वेग में बढोतरी हुई फलतः नीहारिका में केन्द्र से परिधि की ओर कार्यरत अपकेन्द्री बल में वृद्धि होती गई व यह अभिकेन्द्री बल से अधिक हो गया। इस कारण गैसीय पदार्थों की कुछ मात्रा नीहारिका से अलग होकर इसके चारों ओर एक गैसीय वलय (**Ring**) के रूप में इकट्ठा हुआ। कालान्तर में यह गैसीय पदार्थ सम्मिलित व संघनित होकर ठोस पिंड के रूप में ग्रह बन गया। इस प्रकार घूर्णनशील नीहारिका से एक के बाद एक गैसीय वलय बने व जिनके संघनन से विभिन्न ग्रहों का निर्माण हुआ। नीहारिका के शेष भाग के संघनन से सूर्य बना तथा इसी प्रकार से विभिन्न ग्रहों से कालान्तर में उपग्रहों की उत्पत्ति हुई। इस प्रकार विकासवादी सिद्धांत के अनुसार एक विशाल नीहारिका से सौर मंडल की उत्पत्ति होना बताया गया (चित्र 2.2)।

यह परिकल्पना सूर्य से दूरी के आधार पर निकटतम व कनिष्ठ, छोटे किन्तु भारी एवं दूरस्थ व वरिष्ठ, बड़े किन्तु हल्के ग्रहों में विभेदीकरण तथा कोणीय संवेग के वितरण को समझाने में खरी नहीं उतर पाई। क्लार्क एवं मैक्सवेल ने इस परिकल्पना के विपरित प्रमाणित किया कि नीहारिका से पृथक हुए गैसीय पदार्थों का वलय कभी भी सम्मिलित होकर ग्रहों का निर्माण नहीं कर सकता बल्कि गैसीय पदार्थों का अन्तरिक्ष में लीन होने की अधिक संभावना है। अतः यह नीहारिका–परिकल्पना निरर्थक व उपेक्षित मानी जाने लगी।

वाइजेकर की नीहारिका–मेघ परिकल्पना – वाइजेकर (1944) ने नीहारिका–मेघ परिकल्पना में बताया गया कि अन्तरिक्ष में भ्रमण करता हुआ सूर्य अपेक्षाकृत घने गैसीय पदार्थों एवं धूलकणों से निर्मित अन्तरातारकीय मेघ अतिविरितीर्ण विसरित नीहारिका (**Diffused Nebula**) मे प्रविष्ठ हुआ।

सूर्य के चारों ओर इस विसरित नीहारिका के गैसीय पदार्थों का आवरण, गुरूत्वाकर्षण के कारण बन गया। यह सूर्य के घूर्णन की वजह से क्रमशः मन्द गति से घूमने वाली चक्रिका के रूप में परिवर्तित हो गया। चक्रिका का विस्तार सौरमंडल के मौजूदा विस्तार के समान माना गया। इस विशाल नीहारिका के आवरण के संघनन से क्रमशः ग्रहों की उत्पत्ति हुई।

हेन्स आल्फवेन की विद्युत–चुम्बकीय परिकल्पना– हेन्स आल्फवेन (1942) ने विद्युत–चुम्बकीय शक्तियों द्वारा सौर मंडल की उत्पत्ति को समझाने का प्रयास किया। इस परिकल्पना के अनुसार सूर्य अधिक वेग से घूर्णन करता हुआ नीहारिका मेघ में प्रविष्ट करता है जो प्रारम्भिक अवस्था में विद्युत उदासीन कणों से बना हुआ माना गया। आल्फवेन के अनुसार सूर्य के चारों ओर सौर मंडल के समान विशाल क्षेत्र में फैलाव लिया आवरण मंडल आयनित हो जाता है तथा इसमें चुम्बकीय शक्तियों के कारण,

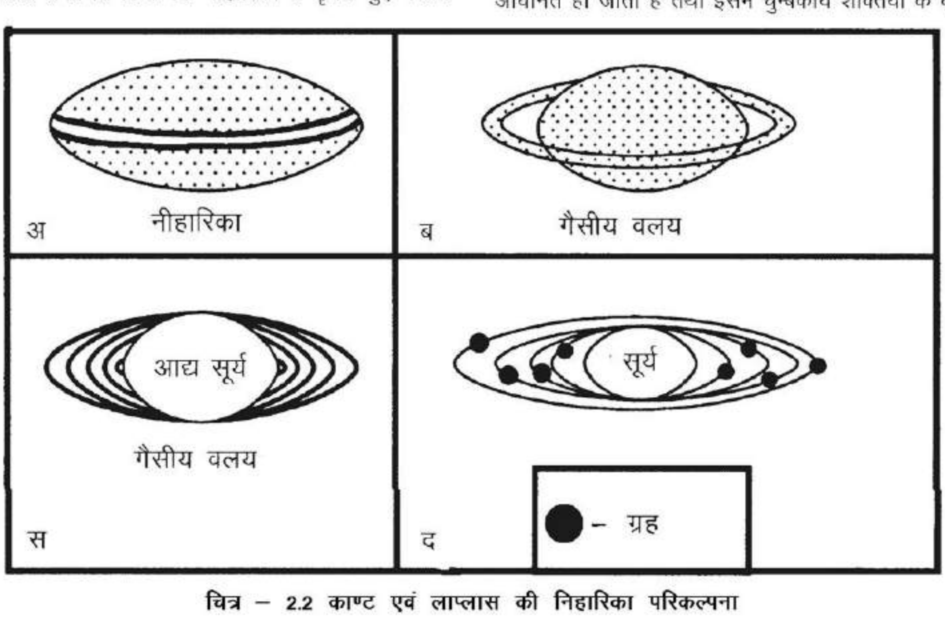

चित्र – 2.2 काण्ट एवं लाप्लास की निहारिका परिकल्पना

चुम्बकीय क्षेत्र में आवेशित कणों की गति के नियमानुसार पदार्थों की मात्रा सूर्य के विषुवतीय क्षेत्र में ही एकत्रित होती है। यह जमाव शनि एवं बृहस्पति ग्रहों की दूरी पर होता है तथा सूर्य के घूर्णन वेग के कारण ये सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करने लगते हैं। तत्पश्चात गैसीय एवं अन्य कण क्रमशः संघनित होकर वृहत ग्रहों की उत्पत्ति करते हैं । तथा इसी प्रकार ग्रहों की चुम्बकीय शक्ति के कारण उपग्रहों की उत्पत्ति हुई है।

कुइपर की नीहारिका–मेघ परिकल्पना– जी.पी. कुइपर (1951) ने वाइजेकर की परिकल्पना को रूपान्तरित करते हुए बताया कि नीहारिका मेघ के गैसीय पदार्थों तथा धूल कणों से बना हुआ विशाल चक्रीय आवरण टूटकर कई विक्षुब्ध भंवरों का रूप धारण करता है, ये भंवर सूर्य की दूरी के अनुसार वृहत होते जाते हैं तथा कई भंवर सम्मिलित होकर "पूर्व–ग्रहों" (Protoplanets) का निर्माण करते हैं एवं इन्हीं पूर्व–ग्रहों से विभिन्न ग्रहों की उत्पत्ति हुई है।

श्मिड्ट की उल्का पिण्ड परिकल्पना– श्मिड्ट की परिकल्पना के अनुसार भ्रमणशील सूर्य ने आकाश गंगा में उपस्थित नीहारिका–मेघ से गैसीय पदार्थ, धूल कण तथा उल्का पदार्थों को अपनी ओर आकर्षित किया जिससे सूर्य के चारों ओर विसरित कणों के झुण्ड का विशाल आवरण बन गया। सूर्य के आकर्षण बल तथा आकाश गंगा में भ्रमण की गति के कारण विसरित कणों के ये झुण्ड सूर्य के चारों ओर दीर्घवृत्ताकार कक्षा में घूमने लगे तथा सूर्य के प्रभाव के कारण ये विसरित झुण्ड विभेदित हो गये। गैसीय पदार्थ के ठोस कणों से अलग होकर छोटे तथा घने पिण्डों का निर्माण हुआ। सूर्य से अपेक्षाकृत दूरस्थ भागों में गैसीय पदार्थ के संघनन से हल्के पिण्ड निर्मित हुये तथा इन पिण्डों के सम्मिलित होने से विभिन्न ग्रहों की उत्पत्ति हुई और इन्हीं पिण्डों से ही धूमकेतू, उल्का पिण्ड इत्यादि भी निर्मित हुए।

प्रलयवादी परिकल्पनाएँ

बफन की टक्कर परिकल्पना– प्रलयवादी प्रक्रम द्वारा सौर मंडल की उत्पत्ति को समझाने की पहली परिकल्पना फ्रांस के वैज्ञानिक बफन ने प्रस्तुत की। इसमें उन्होंने प्रारम्भिक अवस्था में सूर्य को एक अति विशालकाय गैसीय पिण्ड या नीहारिका माना तथा किसी भ्रमणशील विशाल तारे एवं सूर्य की टक्कर के फलस्वरूप विशाल मात्रा में तारकीय पदार्थों का बिखराव हुआ। तारकीय पदार्थ की कुछ मात्रा विचरणशील तारे के साथ अन्तरिक्ष में विलीन हो गई तथा अन्य भाग सूर्य की ओर आकर्षित हो गया। इस भाग पर सूर्य एवं क्रमशः दूर जाते हुए तारे के आकर्षण का सम्मिलित प्रभाव पड़ा जिसके फलस्वरूप अन्ततः सूर्य की ओर आकर्षित ये पदार्थ दीर्घवृत्ताकार कक्षा में सूर्य की परिक्रमा करने लगे। इन्हीं तारकीय पदार्थों से सौर मंडल के अन्य सभी सदस्यों की उत्पत्ति मानी गई है।

चेम्बरलीन एवं मोल्टन की ग्रहाणु परिकल्पना– चेम्बरलीन एवं मोल्टन (1905) की परिकल्पना "सौर ज्वाला" आधारित है। सूर्य की सतह पर होने वाले गैसीय पदार्थों के उद्गार सौर ज्वाला (**Solar Prominence**) कहलाता है। इस परिकल्पना के अनुसार अति भूतकाल में गैसीय पदार्थों की विशाल मात्रा प्रचण्ड सौर ज्वाला के फलस्वरूप सूर्य की सतह से बहुत दूरी तक फैंकी गयी। इसी दौरान एक बड़ा तारा विचरण करते हुये सूर्य के निकट से गुजरा तथा सूर्य सतह से उद्गीर्ण गैसीय पदार्थों की यह मात्रा इस तारे की ओर आकृष्ट हो गई। भ्रमणशील तारा क्रमशः सूर्य से दूर होता गया तथा उसके आकर्षण का प्रभाव भी धीरे–धीरे कम होता गया। अन्ततः गैसीय पदार्थों की यह मात्रा सूर्य की ओर पुनः आकर्षित हो गई तथा सूर्य के चारों ओर दीर्घ वृत्ताकार कक्षा में परिक्रमा करने लगी। इसी गैसीय पदार्थों के संघनन से छोटे पिण्ड या ग्रहाणुओं की उत्पत्ति हुई तथा इन ग्रहाणुओं के सम्मिलित होने से ग्रहों की उत्पत्ति हुई एवं सूर्य के आकर्षण बल के कारण ग्रहों से उपग्रहों की उत्पत्ति हुई।

जीन्स एवं जेफ्रीज की ज्वारीय परिकल्पना– जीन्स एवं जेफ्रीज की ज्वारीय परिकल्पना चन्द्रमा के आकर्षण बल के फलस्वरूप समुद्र की सतह पर उठने वाले ज्वार के प्रक्रम पर आधारित है। इस परिकल्पना के अनुसार अन्तरिक्ष में भ्रमणशील एक अति विशाल तारा 'आदिसूर्य' के बहुत पास से गुजरा व अपने आकर्षण बल के कारण सूर्य की सतह पर विशाल ज्वार को उत्पन्न किया तथा बड़े परिमाण में गैसीय पदार्थ की मात्रा विशालकाय आगन्तुक तारे की ओर आकृष्ट हो गई। भ्रमणशील तारा क्रमशः सूर्य से दूर होता गया एवं उसके आकर्षण के कारण सूर्य की सतह से गैसीय पदार्थों की इस मात्रा का सम्बन्ध विच्छेद हो गया। विशाल तारा भ्रमण करते हुये पुनः अन्तरिक्ष में विलीन हो गया फलतः उसका आकर्षण शनै–शनै कम होते हुए अन्त में शून्य हो गया। गैसीय पदार्थों का पिण्ड पुनः सूर्य के आकर्षण क्षेत्र में लौट कर इसके चारों ओर दीर्घवृत्तीय कक्षा में परिक्रमा करने लगा। अस्थायी लम्बे आकार के गैसीय पिण्ड टूटकर कई भागों में विभक्त हुआ जो क्रमशः संघनित व सम्मिलित होकर ठोस पिण्ड के रूप में ग्रह कहलाए जो सूर्य के चारो ओर दीर्घवृत्तीय कक्षाओं में सूर्य की परिक्रमा करने लगे। सूर्य से निकटता होने पर सूर्य के आकर्षण बल के फलस्वरूप इनकी सतह से ज्वार के रूप में विच्छेदीत हुए पदार्थों से उपग्रहों की उत्पत्ति हुई। यह परिकल्पना ग्रहों के घूर्णन के कारण एवं कोणीय संवेग के वितरण को समझाने में सफल नहीं हो सकी (चित्र 2.3)।

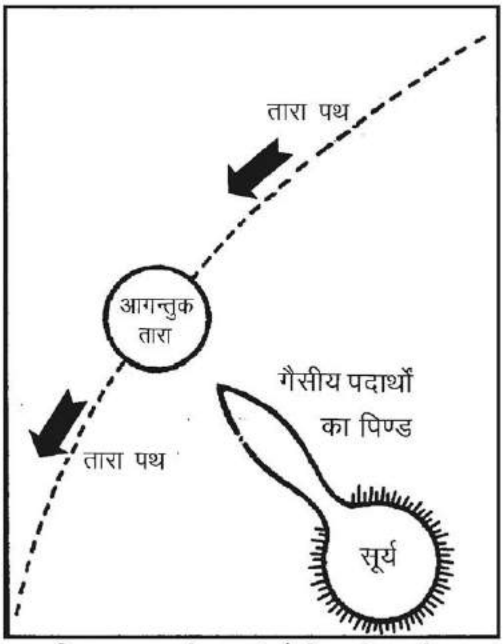

चित्र – 2.3 जीन्स एवं जेफ्रीज की ज्वारीय परिकल्पना

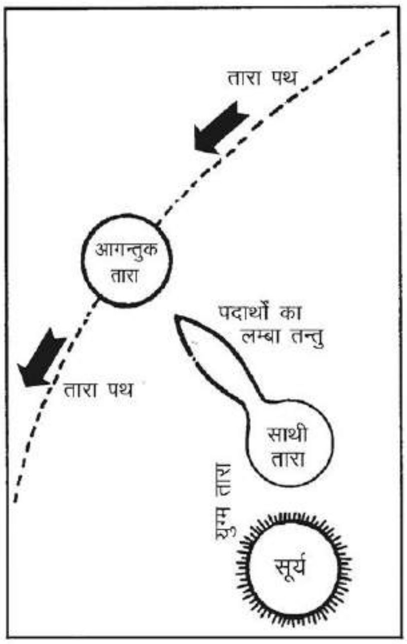

चित्र – 2.4 रसेल एवं लिटिलटन की युग्म तारा परिकल्पना

रसेल एवं लिटिलटन की युग्म तारा परिकल्पना– इस परिकल्पना में 'आदि सूर्य' को एक युग्म तारा के रूप में माना गया। इसमें एक सूर्य तथा दूसरा उसका साथी तारा माना गया। ज्वारीय परिकल्पना के अनुरूप ही एक विशाल तारा विचरण करते हुए सूर्य के साथी तारे के बहुत निकट से गुजरता है तथा ज्वारीय प्रभाव के फलस्वरूप साथी तारे की सतह से पदार्थों की मात्रा एक लम्बे तंतु के रूप में अलग हो जाती है परन्तु सूर्य पर भ्रमणशील तारे से अत्यधिक दूरी होने के कारण ज्वारीय प्रभाव नहीं पड़ता। भ्रमणशील तारे के साथ सूर्य का साथी तारा भी क्रमशः अन्तरिक्ष में विलुप्त हो गया परन्तु साथी तारे से अलग हुए पदार्थों का लम्बा तन्तु सूर्य की ओर आकर्षित होकर उसके चारों ओर दीर्घवृत्ताकार कक्षा में परिक्रमा करने लगा तथा इसी से विभिन्न ग्रहों की उत्पत्ति हुई और इन ग्रहों के ज्वारीय आकर्षण के फलस्वरूप ही उपग्रहों की उत्पत्ति हुई। यह परिकल्पना कोणीय संवेग की पुष्टि करती है (चित्र 2.4)।

रॉसगन की विखण्डन परिकल्पना– रॉसगन ने ज्वारीय परिकल्पना के अनुरूप ही सौर मंडल की उत्पत्ति को समझाते हुए युग्म तारे की उत्पत्ति के लिए विखण्डन प्रक्रिया को जिम्मेदार बताया। घूर्णनशील तारे में संकुचन बढ़ने के साथ इसके घूर्णन वेग में बढ़ोतरी होने के फलस्वरूप अन्ततः तारा विखण्डित होकर दो भागों में विभक्त हो कर युग्म तारे में बदल गया। रॉसगन के अनुसार विखण्डन की अवस्था के समय तारा अस्थायी था तथा उसी समय एक अन्य विशाल तारा बहुत निकट से गुजरा जिससे विखण्डित अस्थायी भाग पर ज्वारीय प्रभाव अधिक प्रबल हो गया। इसके बाद ज्वारीय परिकल्पना की ही तरह सौर मंडल की उत्पत्ति हुई।

बनर्जी की सिफिड परिकल्पना– ज्वारीय परिकल्पना के ही अनुरूप प्रो. ए.सी. बनर्जी (1942) ने सूर्य को एक विशाल परिवर्ती सिफिड के रूप में मानते हुए अपनी परिकल्पना प्रस्तुत की। इस प्रकार का तारा क्रमबद्ध लय से स्पंदन कर रहा था व किसी अन्य आगन्तुक तारे के ज्वारीय प्रभाव के कारण यह सिफिड अस्थायी हुआ तथा उससे पदार्थो की बड़ी मात्रा छिटक कर अलग हुई जिसके संघनन से सूर्य तथा अन्य ग्रहों की उत्पत्ति हुई।

फ्रेड हायल की नवतारा परिकल्पना– फ्रेड हायल (1945) ने भी अपनी परिकल्पना में 'आदि सूर्य' को युग्म तारा माना परन्तु इसमें एक सूर्य तथा दूसरा साथी एक नवतारा था। नवतारा (Nova) अकस्मात प्रज्वलित होकर कुछ समय के लिए

अत्यधिक चमकदार तारा बन जाता है तथा क्रमशः शान्त होकर पुनः निश्तेज हो जाता है। इसके अकस्मात विस्फोटन से प्रचुर मात्रा में अत्यधिक वेग से गैसीय पदार्थों का निष्कासन हुआ। निष्कासन के विपरित दिशा में प्रतिक्षेप वेग प्रतिपादित हुआ। इसी समय एक आगन्तुक तारा इस नवतारा के बहुत निकट से गुजरा, नवतारे के विस्फोटन व उसके प्रतिक्षेप–बल और आगन्तुक तारे के आकर्षण बल के कारण नवतारा अन्तरिक्ष में विलीन हो गया परन्तु गैसीय पदार्थ की बड़ी मात्रा सूर्य की ओर निष्कासित हुई व इसके आकर्षण क्षेत्र में होकर सूर्य के ही चारों ओर परिक्रमा करने लगी तथा इसी गैसीय पदार्थों की मात्रा से ग्रहों की उत्पत्ति हुई। फ्रेड हॉयल ग्रहों के घूर्णन व उपग्रहों की उत्पत्ति के कारण नहीं समझा पाए (चित्र 2.5)।

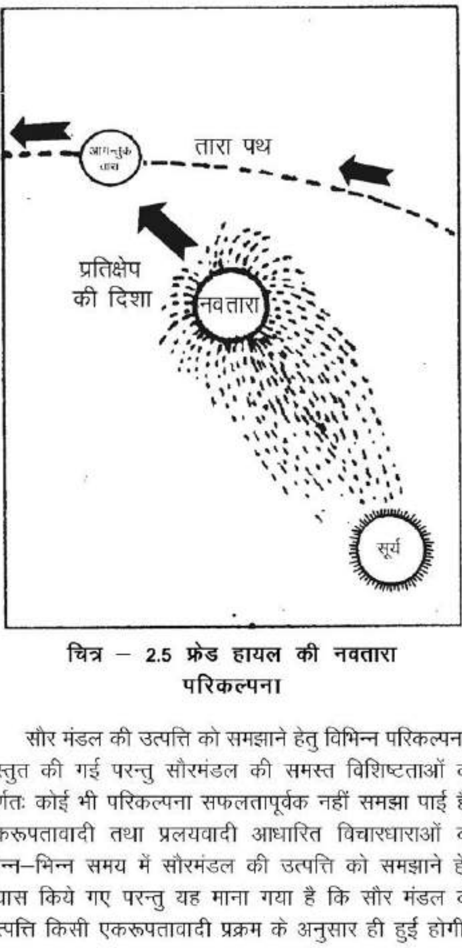

चित्र – 2.5 फ्रेड हायल की नवतारा परिकल्पना

सौर मंडल की उत्पत्ति को समझाने हेतु विभिन्न परिकल्पनाएं प्रस्तुत की गई परन्तु सौरमंडल की समस्त विशिष्टताओं को पूर्णतः कोई भी परिकल्पना सफलतापूर्वक नहीं समझा पाई है। एकरूपतावादी तथा प्रलयवादी आधारित विचारधाराओं को भिन्न–भिन्न समय में सौरमंडल की उत्पत्ति को समझाने हेतु प्रयास किये गए परन्तु यह माना गया है कि सौर मंडल की उत्पत्ति किसी एकरूपतावादी प्रक्रम के अनुसार ही हुई होगी।

पृथ्वी की आंतरिक संरचना

पृथ्वी की विभिन्न गहराईयों में भूकम्पों की उत्पत्ति होती है तथा पृथ्वी की आन्तरिक संरचना के बारे में जानकारी देने में भूकम्पीय तंरगों के अध्ययन की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। भूकम्प के दौरान पृथ्वी की विभिन्न गहराईयों में तीन तरह की भूकम्पीय तरंगे उत्पन्न होती है। इनमें से **प्राथमिक तरंग (Primary Wave)** तथा द्वितीयक तरंग **(Secondary Wave)** या क्रमशः P तथा S तरंग पृथ्वी के आन्तरिक भागों में ही संचारित होती है तथा पिण्डीय तरंगे (Body Waves) कहलाती है। तीसरी प्रकार की **दीर्घ तरंग या L तरंग;** सतही तरंग है एवं भू धरातल पर ही इसका संचरण होता है। इन भूकम्पीय तरंगों का संचरण पृथ्वी की आन्तरिक संरचना पर निर्भर करता है, अतः पृथ्वी की आन्तरिक संरचना को समझने में ये तरंगे महत्वपूर्ण साबित हुई है। प्राथमिक तरंगे गैस, द्रव व ठोस पदार्थों में समान रूप से संचरण करती है वहीं दूसरी ओर द्वितीयक तरंगे केवल ठोस पदार्थों में ही गमन करती है। इन दोनों तरंगो की गति तथा विभिन्न पदार्थों में इनकी संचरणशीलता विभिन्न होती है तथा पृथ्वी की गहराईयों की वृद्धि के साथ इनके वेग में भी वृद्धि होती है। विभिन्न शैलों के प्रत्यास्थ गुणों पर भी इनका वेग निर्भर करता है अतः तरंगों के वेग में आकस्मिक परिवर्तन भी होते हैं तथा ऐसे अकस्मात् परिवर्तन के तलों को असांतत्य तल (Plane of Discontinuity) कहा जाता है। भूकम्पीय तरंगों के वेग पृथ्वी के महाद्वीपीय थल भागों में मौजूद ग्रेनाइट शैलों के घनत्व एवं प्रत्यास्थ नियतांक के आधार पर ऊपरी स्तर में P तरंग का वेग 5.4 किलोमीटर प्रति सेकेण्ड तथा S तरंग का वेग 3.3 किलोमीटर प्रति सेकेण्ड इंगित करता है कि पृथ्वी के सबसे ऊपरी भाग भूपर्पटी का ऊपरी स्तर ग्रेनाइट शैलों से निर्मित है। सिलिका तथा एल्यूमिनियम की प्रचुरता वाले इस स्तर को सिएल (Sial) कहा जाता है। महाद्वीपीय थल के समतल भागों में ग्रेनाइट शैलों के स्तर की मोटाई 10 किलोमीटर है वहीं दूसरी ओर उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में यह स्तर 50 किलोमीटर मोटाई तक पाया जाता है। ग्रेनाइट स्तर के नीचे के स्तर में P तरंग का वेग बढकर 6.5 किलोमीटर प्रति सेकेण्ड तथा S तरंग का वेग बढकर 3.8 किलोमीटर प्रति सेकेण्ड हो जाता है जो अल्पसिलिक शैलों (बेसाल्ट) की उपस्थिति दर्शाता है। इस स्तर को सिलिका तथा मैग्नीशियम प्रचुरता युक्त होने के कारण सिमै (Sima) कहते हैं।

इस बेसाल्ट युक्त स्तर की मोटाई समतल मैदानी क्षेत्र के नीचे सामान्यत 30 किलोमीटर तथा पर्वतीय क्षेत्र के नीचे 10–15 किलोमीटर तक पायी जाती है एवं महासमुद्रों की तली में इसकी मोटाई अति नगण्य होती है। अतः ग्रेनाइट एवं बेसाल्टी शैलों के स्तर मिलकर पृथ्वी के बाहरी कवच भूपर्पटी कहलाता है। भूपर्पटी से नीचे गहराई में स्थित भागों में भूकम्पीय तरंगों के वेग में वृद्धि

होती है तथा इस स्तर के शैल अत्यल्प सिलिक यथा पेरिडोटाइट, इक्लोगाईट, पाइरॉक्सीनाइट तथा ड्यूनाइट है तथा इसे प्रावार (Mantle) कहते हैं। भूपर्पटी व प्रावार स्तरों के बीच भूकम्पीय तरंगो के वेग में अकस्मात् वृद्धि असांतत्य तल का द्योतक है तथा यूगोस्लावाकिया के वैज्ञानिक ए. मोहोरोविसिक ने इसकी खोज की अतः इसे मोहोरोविसिक असांतत्य तल (Mohorovicic Discontinuity) कहते हैं। भूकम्पीय तरंगों का अध्ययन पृथ्वी की 1200 किलोमीटर, 1700 किलोमीटर तथा 2400 किलोमीटर गहराईयों में भी असांतत्य तल पाये जाने का संकेत करता है। 1200 किलोमीटर से 2900 किलोमीटर की गहराई वाले भाग में P तरंगों का वेग बढता हुआ 13.6 किलोमीटर प्रति सेकेण्ड तथा S तरंग का वेग 7.3 किलोमीटर प्रति सेकेण्ड तक हो जाता है। 2900 किलोमीटर से अधिक गहाराई में S तरंगों का गमन नहीं होता है तथा P तरंगों का वेग अचानक घटकर 8.1 किलोमीटर प्रति सेकेण्ड हो जाता है। यह वेग परिवर्तन पृथ्वी की 2900 किलोमीटर गहराई पर एक अन्य असांतत्य तल का सूचक है। इसकी उपस्थिति को गुटनबर्ग तथा वीचर्ट ने प्रमाणित किया, इसे गुटेनबर्ग असंतति कहते हैं जो प्रावार तथा पृथ्वी के सबसे भीतरी भाग क्रोड (Core) के बीच स्थित है। इस असांतत्य तल के नीचे P तरंगो के वेग में पुनः वृद्धि होती है जो 8.1 किलोमीटर प्रति सैकेण्ड से बढ कर पृथ्वी के केन्द्र अर्थात 6371 किलोमीटर की गहराई पर 11.3 किलोमीटर प्रति सैकेण्ड हो जाती है। इस तरह भूकम्पीय तरंगों के अध्ययन से पृथ्वी की गहराई में 2900 किलोमीटर से लेकर 6371 किलोमीटर (पृथ्वी के केन्द्र) तक क्रोड होने की जानकारी मिलती है। भूकम्पीय तरंगो के अध्ययन के आधार पर पृथ्वी की आंतरिक संरचना को भूपर्पटी, प्रावार तथा क्रोड में बांटा गया है।

भूपर्पटी

पृथ्वी का ऊपरी आवरण भूपर्पटी कहलाता है यह मोहोरोविसिक असांतत्य तल तक स्थित है। ठोस शैलों से निर्मित भूपर्पटी का ऊपरी भाग कम घनत्व वाले सिलिकेट खनिजों युक्त अधिसिलिक शैलों (मुख्यतः ग्रेनाइट) का बना है, **सिएल (SiAl)** कहलाता है वहीं निचला भाग अधिक घनत्व पाले सिलिकेट खनिजों युक्त अतिअल्प सिलिक शैलों (पेरिडोटाइट) का बना है, **सिमै (SiMa)** कहलाता है। भूपर्पटी की अधिकतम मोटाई 60 किलोमीटर व माध्य मोटाई 33 किलोमीटर मानी गई है।

प्रावार

भूपर्पटी के नीचे मोहोरोविसिक असांतत्य तल से लेकर गुटेनबर्ग असांतत्य तल तक स्थित अर्थात भूसतह से 33 किलोमीटर से 2900 किलोमीटर तक की गहराई में फैला हुआ भाग प्रावार कहलाता है। इस ठोस भाग में गहराई के साथ घनत्व की वृद्धि होती है तथा इसमें स्थित शैलों में लोह मैग्नीशियम खनिजों की प्रमुखता है। अधिकतर भूकम्पों की उत्पत्ति इसी भाग में होती है।

क्रोड

प्रावार के बाद गुटेनबर्ग असांतत्य तल के नीचे अर्थात पृथ्वी की सतह से 2900 किलोमीटर नीचे से लेकर पृथ्वी के केन्द्र अर्थात 6371 किलोमीटर की गहराई तक का भाग क्रोड कहलाता है। यह मुख्यतः निकल तथा लोह (Ni, Fe) धातु के सम्मिश्रण से बना हुआ है अतः इसे निफे भी कहते हैं। S तरंगो के क्रोड में गमन नहीं करने से प्रावार के बाद 2900 किलोमीटर से लेकर 4580 किलोमीटर तक क्रोड के बाह्य भाग के द्रवरूपी होने के प्रमाण है परन्तु क्रोड के करीब 1790 किलोमीटर आंतरिक भाग के ठोस होने के संकेत P तरंगों के वेग में वृद्धि होने से मिलते है (चित्र 2.6)।

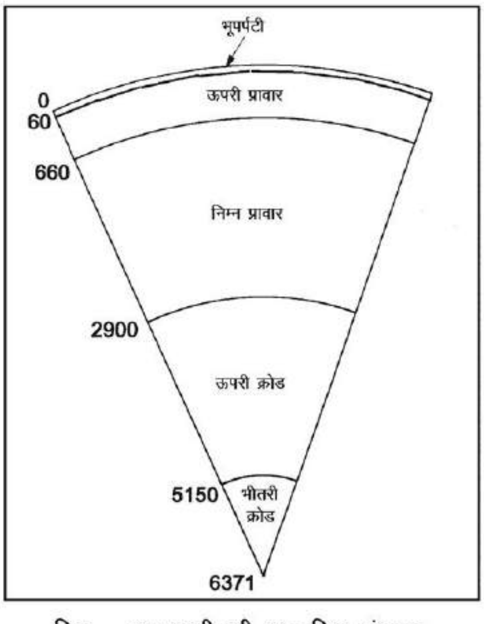

चित्र – 2.6 पृथ्वी की आन्तरिक संरचना

पृथ्वी की आकृति

पृथ्वी की आकृति एक गोलाभ (Spheroid) के समान मानी गई है। पृथ्वी के आकार को जीऑयड (Geoid) कहते हैं। जीऑयड (भूभाग) की सतह पर सभी जगह गुरूत्वाकर्षण बल सदैव ऊर्ध्वाधर होता है यही पृथ्वी के आकार की प्रमुख विशेषता है।

पृथ्वी की आयु

पृथ्वी की आयु निर्धारण में रेडियों ऐक्टिव या विघटननाभिक विधि के उपयोग से पृथ्वी की आयु 4 अरब 60 करोड़ वर्ष आंकलित की गई है। इस विधि के खोज से पूर्व पृथ्वी की आयु ज्ञात करने में पृथ्वी की शीतलन की दर, अवसादों के निक्षेपण की गति, महासागरों की लवणता के अनुसार तथा जीवाश्मीय प्रमाणों के अनुसार इत्यादि अन्य आधुनिक धारणाओं का उपयोग किया गया। प्राचीन धारणाओं में सन् ईस्वी के प्रायः एक हजार वर्ष पूर्व जोरास्टर ने पृथ्वी की आयु उस समय 12 हजार वर्ष बताई व इसके तीन हजार वर्ष ओर रहने की बात कही। 17 वीं शताब्दी में आयरलैण्ड के आर्क बिशप उश्हेर ने पृथ्वी की सृष्टि ईसा 4004 वर्ष पूर्व होना बताया अर्थात वर्तमान में पृथ्वी की आयु 6019 वर्ष की होती है। प्राचीन वैदिक व पौराणिक ग्रन्थों में भी पृथ्वी की आयु सम्बन्धी गणना की गई है। इस गणना के अनुसार 360 दिन का समय एक मानव वर्ष निर्धारित किया गया था तथा 360 मानव वर्ष का एक दैव वर्ष माना गया। इसके आधार पर चार युग के समय को एक महायुग मानकर सम्पूर्ण सृष्टि की अवधि का निर्धारण किया। इस गणना के आधार पर पृथ्वी की आयु 1 अरब, 97 करोड़, 29 लाख, 49 हजार, 69 मानव वर्ष आंकलित की गई।

पृथ्वी की आयु निर्धारण सम्बन्धी आधुनिक धारणाओं का वर्णन निम्न अनुसार है–

पृथ्वी की शीतलन की दर के अनुसार

लार्ड केल्विन (1897) ने पृथ्वी के ठोस पर्पटी के शुरूआती उच्च ताप का अनुमान लगाया व शीतलन की दर के आधार पर पृथ्वी की आयु 20–40 करोड़ वर्ष आकलित की। पृथ्वी के शीतलन की दर सर्वदा एक समान नहीं होने तथा भूपर्पटी में विद्यमान रेडियो एक्टिव तत्वों से उत्पन्न ताप के बारे में केल्विन को जानकारी नहीं थी अतः पृथ्वी की सही आयु का आकलन नहीं हो पाया।

अवसादों के निक्षेपण की गति के अनुसार

पृथ्वी पर निक्षेपित समस्त अवसादी शैलों की मोटाई तथा समुद्रों में अवसादन की गति का आकलन कर आर्किबाल्ड गीकि ने पृथ्वी की आयु 40 करोड़ वर्ष बताई। इसी विधि से अन्य वैज्ञानिकों यथा रीड ने 60 करोड़ वर्ष, गुडचाइल्ड ने 70 करोड़ वर्ष, सोलास ने 8 करोड़ वर्ष तथा शुचर्ट ने 50 करोड़ वर्ष भिन्न–भिन्न आयु आकलित की थी। सतत् अवसादन संभव नही रहा तथा अवसादन की दर भी सदैव एक समान नहीं रही एवं पूर्व में संचित अवसादों का अपरदन भी हुआ अतः अवसादी शैलों की कुल मोटाई का सही आकलन नहीं हो पाया जिसके फलस्वरूप इस विधि से भी पृथ्वी की आयु का सही आकलन संभव नहीं हो पाया।

महासागरों की लवणता के अनुसार

एडवर्ड हेली एवं जॉली ने महासागरों की लवणता के आधार पर पृथ्वी की आयु निर्धारण करने का प्रयास किया। महासागरों के जल में प्रारंभ में लवणता का अभाव था। समुद्र में नदियां अपने साथ मार्ग में आने वाले विभिन्न स्थानों में उपस्थित लवणों को जल में घोलकर साथ लेकर आती है तथा धीरे–धीरे हर वर्ष इकठ्ठे हुए लवणों की मात्रा सतत रूप से बढती जाती है। नदियां प्रति वर्ष करीब 40 करोड़ टन लवण समुद्र में जमा करती है। एफ. डब्ल्यू. क्लार्क (1923) ने समुद्रों के जल का आयतन (15×10^8 घन मीटर), समुद्र के जल में उपस्थित लवण का प्रतिशत (3%), लवण का भार (4×10^{16} टन) तथा प्रतिवर्ष नदियों द्वारा समुद्र में जमा होने वाले लवण की मात्रा (4×10^8 टन) की गणना करते हुए पृथ्वी की आयु की गणना 10 करोड़ वर्ष ($4 \times 10^{16} / 4 \times 10^8$) आकलित की। समुद्रों में नदियों द्वारा लवण ले जाने की प्रक्रिया की शुरूआत होने से पूर्व जल वाष्प रूप में था और उसके जल में परिवर्तित होने में लगे समय का गणना में विचार नहीं किया गया तथा महासागरों में लवणता की वृद्धि दर भी सदैव एक समान नहीं रही अतः पृथ्वी की आयु का सही निर्धारण नहीं हो पाया।

जीवाश्मीय प्रमाणों के अनुसार

पृथ्वी पर प्रारंभिक जीव एक कोशिक व क्रमशः विकास के फलस्वरूप बहुकोशिक हुआ तथा समय के साथ जटिलता के रूपों में विकास क्रम के द्वारा लम्बी जैव विकास यात्रा तय कर मौजूदा जैव विविधता के स्वरूप में पहुँचा। पूर्व कैम्ब्रियन कल्प की शैलों में सुस्पष्ट जीवाश्मों का अभाव है परन्तु कैम्ब्रियन कल्प तथा उसके बाद के नवीन शैल समूहों में पर्याप्त मात्रा में जीवाश्म मिलते हैं जिनके अध्ययन से विकास क्रम की कड़ियों को जोड़कर जीवों की अधिकतम आयु निर्धारित करते हुए पृथ्वी की तुलनात्मक आयु निकाली गई है। जीव विकास की सम्पूर्ण अवधि करीब 300 करोड़ वर्ष आंकी जाती है तथा पृथ्वी की उत्पत्ति निश्चित तौर पर जीव उत्पत्ति से बहुत समय पूर्व हुई थी।

रेडियॉएक्टिव या विघटन नाभिक विधियों के अनुसार

पृथ्वी के भूपर्पटी की शैलों में रेडियॉएक्टिव तत्व मिलते हैं जिनका सतत् एवं स्वतः विघटन होता रहता है। ये तत्व अस्थायी होते हैं तथा निरंतर विघटित होते हैं। पृथ्वी की निरपेक्ष आयु ज्ञात करने में इनकी मदद उपयोगी साबित हुई है। इन तत्वों के स्वतः विघटन से एल्फा, बीटा तथा गामा किरणों के रूप में विकिरण निकलते हैं तथा मूल तत्व प्रति क्षण अन्य तत्वों में बदलते रहते हैं। रेडियोएक्टिव तत्वों का शेष उत्पाद सदैव सीसा (Lead) या इसके विभिन्न समस्थानिक (Isotopes) होते हैं। भूपर्पटी में यूरेनियम (U), रेडियम (Ra), थोरियम (Th), पोटेशियम (K) तथा इनके समस्थानिक मुख्यतः मिलते हैं। ये रेडियॉएक्टिव तत्व

समय के साथ स्वतः विघटित होते हैं तथा सीसा (Pb) एवं हीलियम (He) की उत्पत्ति होती है। रेडियोंएक्टिव तत्वों का तत्वान्तरण निम्नानुसार होता है–

$$(U^{235} \longrightarrow Pb^{207}\ ;\ U^{238} \longrightarrow Pb^{206};\ Th^{232} \longrightarrow Pb^{208})$$

रेडियोंएक्टिव तत्वों के विघटन की एक निश्चित गति होती है। रेडियोंएक्टिव तत्व के प्रत्येक परमाणु के नाभिक के अर्ध भाग के विघटन की अवधि अर्द्ध आयु (Half Life) कहलाती है। शैलों के अत्यन्त सावधानी से अतिसूक्ष्म विश्लेषण के अनुसार विघटनाभिकता से उत्पन्न सीसा एवं हीलियम की मात्रा तथा रेडियोएक्टिव तत्वों के अविघटित भागों की मात्रा ज्ञात की जा सकती है तथा इन्हीं तथ्यों के आधार पर शैलों की निरपेक्ष आयु आकलित की जाती है। शैलों की आयु निर्धारण में यूरेनियम–सीसा, पोटेशियम–आर्गन तथा रूबिडियम–स्ट्रांशियम विधियों का उपयोग किया जाता है। विशिष्ट रेडियोएक्टिव तत्वों के विघटन तत्व तथा अर्द्ध आयु की जानकारी तालिका क्रमांक–2.1 में दी गई है–

तालिका क्रमांक–2.1 रेडियोएक्टिव तत्वों के विघटन तत्व तथा इनकी अर्द्ध आयु

क्र.स.	जनक तत्व (Mother Element)	विघटन तत्व (Daughter Element)	अर्द्ध आयु (Half Life)
1.	U^{238}	Pb^{206} - 8 He^{4}	4.468×10^{9} वर्ष
2.	U^{235}	Pb^{207} - 7 He^{4}	0.704×10^{9} वर्ष
3.	Th^{232}	Pb^{208} - 6 He^{4}	1.405×10^{10} वर्ष
4.	Rb^{87}	Sr^{87}	4.92×10^{10} वर्ष
5.	K^{40}	Ar^{40} - Ca^{40}	1.27×10^{9} वर्ष
6.	C^{14}	N^{14}	5730 वर्ष

शैल नमूने की आयु का निर्धारण निम्न सूत्र द्वारा आकलित किया जाता है–

$$\text{शैल की आयु} = 3.323\ T \log_{10} \{1 + Nd / Np\}$$

यहाँ Nd = विघटन तत्व के परमाणुओं की संख्या,

Np = वर्तमान में जनक तत्व के परमाणुओं की संख्या तथा

T = जनक तत्व की अर्द्ध आयु है।

मॉस स्पेक्ट्रोमीटर के उपयोग से जनक तथा विघटन तत्वों की शैलों में उपस्थित मात्रा का सटीकता से मापन किया जाता है। जिरकॉन व स्फीन खनिजों में यूरेनियम–238, मस्कोवाइट, बायोटाइट, हार्नब्लेंड व ग्लूकोनाइट खनिजों में पोटेशियम 40 तथा मस्कोवाइट, बायोटाइट व माइक्रोक्लीन खनिजों में रूबिडियम 87 के मापन द्वारा शैलों की आयु की गणना (डेटिंग) की जाती है।

रेडियोएक्टिव विधि द्वारा पृथ्वी के प्राचीनतम शैलों की औसत आयु 350 करोड़ वर्ष आकलित की गई है तथा पृथ्वी की उत्पत्ति निश्चित तौर पर इन प्राचीन शैलों से कहीं अधिक समय पूर्व हुई होगी। उल्कापिण्डों से सीसे के अलगाव तथा इसकी रेडियोमेट्रिक डेटिंग से पृथ्वी की आयु 460 करोड़ वर्ष आंकी गई है।

महाद्वीपों एवं महासागरों का विवरण

महाद्वीप

पृथ्वी के प्रमुख सतही लक्षण महाद्वीप जमीन का विस्तृत फैलाव है जो पृथ्वी पर ही मौजूद अन्य प्रमुख लक्षण महासागरों से स्पष्ट रूप से अलग दिखाई देते हैं। स्पष्ट सीमाओं वाले धरती के विस्तृत क्षेत्र को महाद्वीप कहते हैं। पृथ्वी पर **सात महाद्वीप यथा एशिया, अफ्रीका, उत्तरी अमेरिका, दक्षिण अमेरिका, यूरोप, आस्ट्रेलिया तथा अंटार्कटिका है (चित्र 2.7)।** पृथ्वी की कुल सतह के करीब एक चौथाई भाग तक इन महाद्वीपों का फैलाव है। सबसे बड़ा महाद्वीप एशिया करीब 4 करोड़ 40 लाख वर्ग किलोमीटर तक विस्तृत है जो पृथ्वी के कुल भू भाग का करीब 29.5 फीसदी है। क्षेत्रफल के हिसाब से एशिया के बाद दूसरे नम्बर पर अफ्रीका महाद्वीप है जिसका विस्तार 2 करोड़ 98 लाख वर्ग किलोमीटर तक है। यह पृथ्वी के भूभाग का 20 फीसदी है। अफ्रीका, उत्तरी अमेरिका व दक्षिण अमेरिका महाद्वीपों की ज्यामितिय आकृति में एकरूपता दिखाई पड़ती है, ये तीनों महाद्वीप त्रिकोणाकार आकृति के हैं एवं इनकी नोक दक्षिण दिशा की ओर फैली हुई है। भारत प्रायद्वीप भी इनके साथ समरूपता प्रदर्शित करता है। अफ्रीका तथा दक्षिण अमेरिका महाद्वीपों के पृष्ठीय विन्यास तथा तटों में भी एकरूपता परिलक्षित होती है। सातों महाद्वीपों में दूरियों के बावजूद वनस्पति, पेड़–पौधे एवं जीव–जन्तुओं में भी काफी एकरूपता पायी जाती है। इनकी पुष्टि जीवाश्मों द्वारा भी होती है जो इन महाद्वीपों में पुराजलवायु समानता के भी संकेत करते हैं। इससे साबित होता है कि पूर्व काल में ये सभी महाद्वीप एक साथ थे तथा एक ही जलवायु कटिबन्ध में होने के कारण इनकी वनस्पति, पेड़–पौधे एवं जीव–जन्तुओं में एक समानता है। महाद्वीपों का यह सम्मिलित स्वरूप 'पेन्जिया' कहलाता है। कालान्तर में इसके विखण्डन व विस्थापन के फलस्वरूप ये महाद्वीप अपनी वर्तमान स्थिति में पहुँचे हैं।

एशिया

उत्तरी गोलार्द्ध में स्थित एशिया, आकार और जनसंख्या की दृष्टि से विश्व का सबसे बड़ा महाद्वीप है। यह महाद्वीप भूमध्य सागर, अंध महासागर, आर्कटिक महासागर, प्रशान्त महासागर

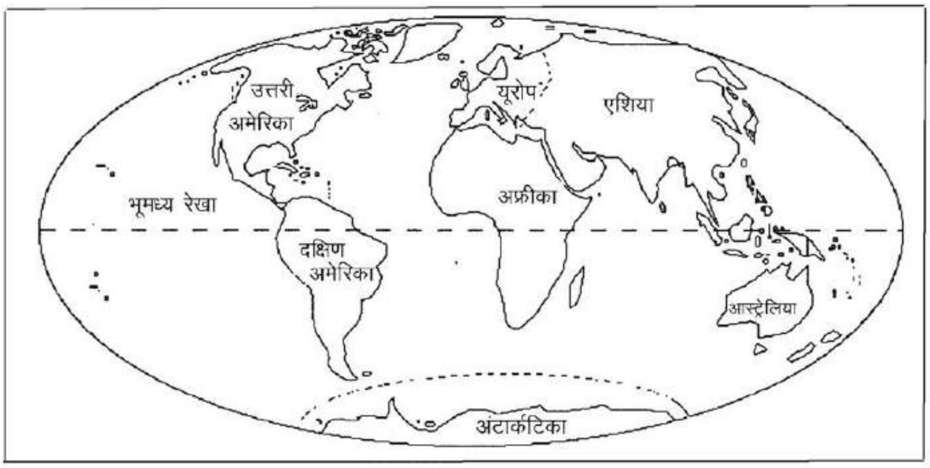

चित्र – 2.7 पृथ्वी पर महाद्वीपों का वितरण

एवं हिन्द महासागर से घिरा हुआ है। एशिया महाद्वीप अपने में कुछ विशाल रेगिस्तान, ऊंचे पर्वतो जिनमें सर्वाधिक ऊंची चोटी माउन्ट एवरेस्ट (8848 मीटर) शामिल है तथा कुछ सबसे लम्बी नदियों को समेटे हुए हैं। इसमें 47 देश सम्मिलित हैं।

अफ्रीका

विश्व की 15 फीसदी जनसंख्या धारक अफ्रीका महाद्वीप के उत्तर में भूमध्य सागर एवं यूरोप महाद्वीप, पश्चिम में अन्ध महासागर, पूर्व में अरब सागर तथा हिन्द महासागर है। महाद्वीप में विशाल मरूस्थल, अत्यन्त घने वन, विस्तृत घास के मैदान, बड़ी–बड़ी नदियां व झीलें हैं। मुख्य मध्याह्न रेखा (0°) अफ्रीका महाद्वीप के घाना देश की राजधानी अक्रा शहर से होकर गुजरती है। इस महाद्वीप में सहारा मरूस्थल, किलिमंजारो पर्वत (5963 मीटर) तथा सुषुप्त ज्वालामुखी है तथा युगांडा, तंजानिया ओर केन्या की सीमा पर स्थित मीठे पानी की बड़ी झील विक्टोरिया है। अफ्रीका ऊंचे पठारों का महाद्वीप है। इसमें 54 देश सम्मिलित है।

उत्तरी अमेरिका

तीसरा सर्वाधिक बड़ा उत्तरी अमेरिका महाद्वीप करीब 2 करोड़ 47 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में विस्तारित है जो पृथ्वी के कुल भूभाग का करीब 16.5 फीसदी है। उत्तर में यह आर्कटिक महासागर, पूर्व में उत्तरी अंध महासागर, दक्षिण पूर्व में कैरेबियाई सागर और पश्चिम में उत्तरी प्रशान्त महासागर से घिरा हुआ है। उत्तरी अमेरिका की जलवायु और वनस्पति में विविधता पाई जाती है, विश्व की अधिकतर जलवायु के प्रकार यहां पाये जाते हैं। सर्वाधिक ऊंची चोटी मैक्निले (6194 मीटर) हैं। इसमें 23 देश सम्मिलित है।

उत्तरी अमेरिका भौगोलिक रूप में कनाडियाई शील्ड, अप्पालचियन, मैक्सिको की खाड़ी, भीतरी मैदानी क्षेत्र तथा अमेरिकी कोर्डिल्लेरा में विभक्त है। कोर्डिल्लेरा पर्वतों व नदी–घाटियों की एक जटिल श्रृंखला है जो अलास्का से लेकर मैक्सिको तक विस्तारित है तथा जिसके अन्तर्गत रॉकी पर्वत श्रेणी भी आती है।

दक्षिण अमेरिका

पश्चिम गोलार्द्ध का यह महाद्वीप विश्व का चौथा बड़ा महाद्वीप है तथा करीब 1 करोड़ 76 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में विस्तृत है। इसके उत्तर में कैरेबियाई सागर तथा पनामा नहर, पूर्व तथा उत्तर–पूर्व में अन्ध महासागर, पश्चिम में प्रशान्त महासागर तथा दक्षिण में अंटार्कटिक महासागर स्थित है। भूमध्य रेखा इस महाद्वीप के उत्तरी भाग से एवं मकर रेखा मध्य से गुजरती है, इस कारण इसका अधिकांश भाग उष्ण कटिबंध में पड़ता है। पनामा नहर इसे पनामा भूडमरूमध्य पर उत्तरी महाद्वीप से अलग करती है। इस महाद्वीप के समुद्री तट की लम्बाई 32 हजार किलोमीटर है। खनिज तथा प्राकृतिक सम्पदा से धनी इस महाद्वीप में विश्व की सबसे लम्बी पर्वत श्रेणी एण्डीज पर्वतमाला तथा सबसे ऊंची टीटीकाका झील है। भूमध्य रेखा के निकट पेरू देश में चिम्बोरेजो तथा कोटोपैक्सी नामक विश्व के सबसे ऊंचे ज्वालामुखी पर्वत (6096 मीटर) है। अमेजन, ओरीनिको, रियो डी ला प्लाटा यहाँ की प्रमुख नदियां है। इस महाद्वीप की सर्वाधिक ऊंची चोटी ऐकोनकागुआ (6959 मीटर) है। इस महाद्वीप में 12 देश सम्मिलित है। यह महाद्वीप पृथ्वी के भूभाग का करीब 12 फीसदी है।

यूरोप

यूरोप महाद्वीप एशिया से जुड़ा हुआ है तथा दोनों सम्मिलित रूप में यूरेशिया कहलाते हैं। यूरोप महाद्वीप करीब 97 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में विस्तारित है तथा पृथ्वी के कुल भूभाग का करीब 6.5 फीसदी है। एशिया से यूरोप का विभाजन इसके पूर्व में स्थित यूराल पर्वत के जल विभाजक यथा यूराल नदी, कैस्पियन सागर, कॉकस पर्वत श्रृंखला और दक्षिण–पश्चिम में स्थित काले सागर के द्वारा होता है। यूरोप के उत्तर में आर्कटिक महासागर और अन्य जल निकाय, पश्चिम में अटलांटिक महासागर, दक्षिण में भूमध्य सागर और दक्षिण–पश्चिम में काला सागर और इससे जुड़े जलमार्ग स्थित है। जनसंख्या के हिसाब से यूरोप एशिया व अफ्रीका के बाद तीसरा सबसे बड़ा आबादित तथा क्षेत्रफल के हिसाब से छठा बड़ा महाद्वीप है। यूरोप मुख्यतः शीतोष्ण जलवायु क्षेत्रों में से है। यूरोप में सर्वाधिक ऊंची चोटी माउण्ट इलब्रश (5633 मीटर) है। इस महाद्वीप में 50 देश सम्मिलित हैं।

आस्ट्रेलिया

यह एकमात्र ऐसी जगह है जिसे एक ही साथ महाद्वीप, एक राष्ट्र व एक द्वीप माना जाता है। यह दक्षिण गोलार्द्ध में स्थित है तथा करीब 77 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में विस्तारित हैं। यह पृथ्वी पर कुल भूभाग का करीब 5.2 फीसदी है। इसकी तटरेखा 34 हजार 218 किलोमीटर है। विशाल अवरोधक चट्टान, दुनिया का सबसे बड़ा मूंगा चट्टान, उत्तरी पूर्व तट से बहुत कम दूरी में स्थित है तथा 2 हजार किलोमीटर क्षेत्र में फैला है। पश्चिम ऑस्ट्रेलिया में दुनिया का सर्वाधिक बड़ा पत्थर का खम्भा 'मांउट अगस्टस' है। ऑस्ट्रेलिया के बड़े अर्धशुष्क भूमि भाग में मरूस्थल फैला हुआ है। क्षेत्रफल के लिहाज से यह सबसे छोटा महाद्वीप है।

अंटार्कटिका

पृथ्वी का दक्षिणतम महाद्वीप है, जिसमें दक्षिणी ध्रुव अंतर्निहित है। इसका क्षेत्रफल करीब 140 लाख वर्ग किलोमीटर है तथा पांचवा बड़ा महाद्वीप है। यह पृथ्वी के भूभाग का करीब 9.6 फीसदी है। यह चारो ओर से दक्षिणी महासागर से घिरा हुआ है। अंटार्कटिका का 98 फीसदी भाग औसतन 1.6 किलोमीटर मोटी बर्फ से आच्छादित है। यह विश्व का सबसे ठण्डा, शुष्क और तेज हवाओं वाला महाद्वीप है।

महासागर

पृथ्वी की सतह के कुल क्षेत्रफल के 71 फीसदी भाग में फैला खारे पानी का विशाल क्षेत्र जो 36.1 करोड़ वर्ग किलोमीटर में फैला है, महासागर कहलाता है। पृथ्वी के जल मण्डल का यह प्रमुख भाग जो महाद्वीपों के मध्य द्रोणियों में स्थित लवणीय जल वाले विशाल क्षेत्र को सम्मिलित किए हुए है। इनकी तुलना में अपेक्षाकृत कम विस्तारित लवण जलयुक्त भाग समुद्र या सागर कहलाते हैं, जो कि सदैव महासागर से सम्बद्ध रहते हैं। पृथ्वी पर उपलब्ध जल राशि का 97 फीसदी महासागरों में पाया जाता है तथा महासागरों की औसत गहराई करीब 3700 मीटर है तथा इनका कुल आयतन 320 मिलियन क्यूबिक मीटर है। पृथ्वी पर कुल पांच महासागर आकार में घटते क्रम में क्रमशः **प्रशान्त महासागर (Pacific Ocean), अंध महासागर (Atlantic Ocean), हिन्द महासागर (Indian Ocean), दक्षिण ध्रुवीय महासागर (Southern Ocean / Antarctic Ocean) तथा उत्तर ध्रुवीय महासागर (Arctic Ocean) है (चित्र 2.8)।**

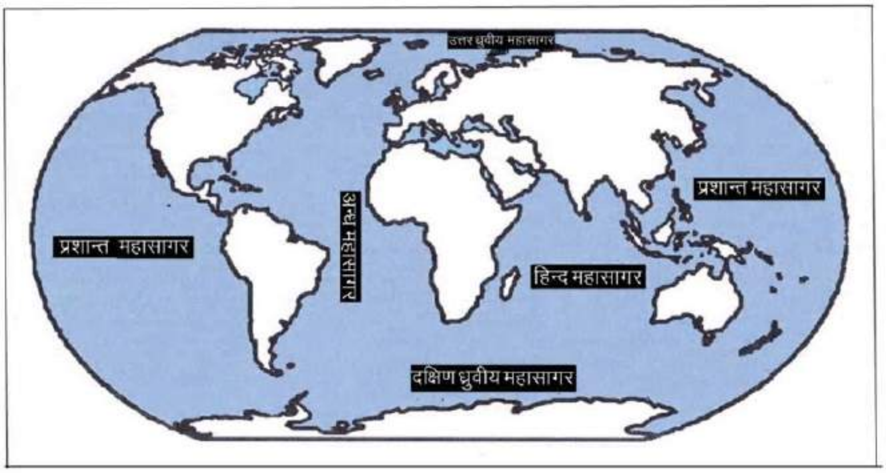

चित्र–2.8 पृथ्वी पर महासागरों का वितरण

प्रशान्त महासागर

यह विश्व का सर्वाधिक बड़ा तथा गहरा महासागर है जो एशिया और अमेरिका को अलग करता है। यह 16 करोड़ 87 लाख 23 हजार वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में विस्तारित है (कुल महासागरीय क्षेत्र का 46.6 फीसदी)। यह फिलीपींस तट से लेकर पनामा तक करीब 15216 किलोमीटर चौड़ा तथा बेरिंग जलडमरू मध्य से लेकर दक्षिण अंटार्कटिका तक करीब 16885 किलोमीटर लम्बा है। प्रशान्त महासागर की औसत गहराई करीब 4267 मीटर है। प्रशान्त महासागर की आकृति त्रिभुजाकार है तथा इसके तल की आकृति जटिल है। इसके सीमान्त क्षेत्र में जलमग्न पर्वत श्रेणियां हैं जिनमें कई ज्वालामुखी पर्वत भी है। पृथ्वी की सर्वाधिक गहराई वाली खाई मेरिआना ट्रेंच प्रशान्त महासागर में स्थित है। जिसकी गहराई 11035 मीटर है।

अंध महासागर

यह महासागर यूरोप तथा अफ्रीका महाद्वीपों को नई दुनियां के महाद्वीपों से पृथक करता है एवं इसका आकार लगभग गणित के अंक 8 के समान है। यह 8 करोड़ 51 लाख 33 हजार वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला है तथा कुल महासागरीय क्षेत्र का 23.5 फीसदी है। इस महासागर की तली के मध्य भाग में एक विशाल जल मग्न पर्वत श्रेणी है जिसे मध्य अटलांटिक कटक कहते हैं। इस महासागर में सर्वाधिक गहरी पोर्टो रीको ट्रेंच की गहराई 8605 मीटर है।

हिन्द महासागर

यह पृथ्वी पर तीसरा सर्वाधिक बड़ा महासागर है तथा पृथ्वी की सतह पर उपस्थित कुल पानी का 20 फीसदी भाग इसमें समाहित है। उत्तर में यह भारतीय उप महाद्वीप से, पश्चिम में पूर्व अफ्रीका, पूर्व में हिन्दचीन, सुंदा द्वीप समूह व ऑस्ट्रेलिया तथा दक्षिण में दक्षिण ध्रुवीय महासागर से घिरा हुआ है। यह 7 करोड़ 5 लाख 60 हजार वर्ग किलोमीटर (महासागरों के कुल क्षेत्र का 19.5 फीसदी) क्षेत्र में फैला है। जावा ट्रेंच इस महासागर में सर्वाधिक गहराई (7125 मीटर) वाली खाई है।

दक्षिण ध्रुवीय महासागर

इसे दक्षिण महासागर या अंटार्कटिक महासागर भी कहते हैं। यह 2 करोड़ 19 लाख 60 हजार वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला है, यह महासागरों के कुल क्षेत्र का 6.1 फीसदी है। कुछ भूगोलवेत्ता इसे दक्षिणी प्रशान्त महासागर, दक्षिणी अटलांटिक महासागर या हिन्द महासागर का दक्षिणी हिस्सा मानते है। इस महासागर में अनेक प्लावी हिमशैल (आइसबर्ग) तैरते रहते हैं।

उत्तर ध्रुवीय महासागर

इसे आर्कटिक महासागर भी कहते हैं, यह पृथ्वी के उत्तरी गोलार्द्ध में स्थित है। पांच महासागरों में सबसे छोटे इस महासागर का फैलाव 1 करोड़ 55 लाख 58 हजार वर्ग किलोमीटर (महासागरों के कुल क्षेत्र का 4.3 फीसदी) क्षेत्र में है। लगभग पूरी तरह से यूरेशिया और उत्तरी अमेरिका से घिरा यह महासागर सर्दियों में पूर्ण रूपेण तथा साल के अन्य समयावधि में आंशिक रूप से समुद्री बर्फ से आच्छादित रहता है। इस महासागर की औसत लवणता सबसे कम है।

पर्वतों के प्रकार एवं उत्पत्ति

पर्वत महाद्वीपों के मुख्य लक्षण है तथा स्थलाकृति का एक महत्वपूर्ण आकर्षित करने वाला अभिलक्षण है। भूवैज्ञानिक दृष्टि से महत्वपूर्ण पर्वत धरातल के वे भाग हैं जो आसपास के क्षेत्रों की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक उत्थान लिए होते हैं। छोटे पर्वत 'पहाड़' कहलाते हैं, सामान्यतः इनकी ऊंचाई 300 मीटर से कम होती है। लम्बे व संकरे पर्वत 'कटक' (Ridge) कहलाते हैं, तथा कटकों का समूह 'पर्वत श्रेणी' (Mountain Range) कहलाती है, इनका निर्माण एक ही समय में एक ही प्रक्रम द्वारा होता है। दो या अधिक पर्वत श्रेणियाँ एक ही समय व एक ही क्षेत्र में उत्पन्न होती है तो इन्हें 'पर्वत समूह' (Mountain System) कहते हैं। हिमालय पर्वत समूह तथा रॉकी पर्वत समूह इनके उदाहरण है। वहीं दूसरी ओर पर्वत श्रेणियों या समूह एक ही अथवा विभिन्न काल में तथा एक ही या अनेक प्रक्रमों के फलस्वरूप निर्मित होते हैं एवं सामान्यतः समान्तर होते हैं तो पर्वत माला' (Mountain Chain) (उदाहरणस्वरूप – अरावली पर्वत माला) कहलाते हैं। महाद्वीप के किसी भाग विशेष में पर्वत मालाएँ, पर्वत समूहों तथा पर्वत श्रेणियों के संयुक्त रूप में उपस्थिति होने पर इन्हें कार्डीलेरा (Cordillera) कहते हैं। महाद्वीप के विशाल क्षेत्र में फैले इनकी आयु भिन्न–भिन्न होती है। उत्तर दक्षिण अमेरिका के पश्चिमी तट में उत्तर से दक्षिण तक विस्तृत रॉकी, एण्डीज इत्यादि सभी पर्वत समूह तथा पर्वतमालाओं को सम्मिलित स्वरूप में "अमेरिकी कार्डीलेरा" इसका उदाहरण है। पर्वतों का यह वर्गीकरण भौगोलिक व्यवस्था तथा विस्तार के आधार पर किया गया है।

आयु के आधार पर पर्वतों को चार प्रकार में बांटा गया है तथा यह वर्गीकरण पर्वत निर्माण के लिए जिम्मेवार पर्वत निर्माणकारी हलचलों (Orogenic Movement) पर आधारित है। करीब 55–60 करोड़ वर्ष पूर्व कैम्ब्रियन तथा प्राक–कैम्ब्रियन कल्प में हुई हलचल को चर्नियन पर्वतन (Chernian Orogensis) कहते हैं। इसके फलस्वरूप दिल्ली, कडप्पा व धारवाड़ क्रम के पर्वतों का निर्माण हुआ। करीब 39–49 करोड़ वर्ष पूर्व आर्डोविशन से डिवोनी के प्रारम्भिक काल में कैलिडोनियन पर्वतन (Caledonian Orogenesis) हुई। स्कॉटलैण्ड पर्वत, स्कैण्डेनेविया पर्वत तथा अपलेशियन पर्वत, अरावली पर्वत तथा सतपुड़ा पर्वत इसी कोटि में है। करीब 25–30 करोड़ वर्ष पूर्व के करीब कार्बनी–परमियन कल्प में हरसीनियन पर्वतन (Hercynian Orogenesis) के दौरान

पीनाइन, हार्ज, वारजेज एवं ब्लैक फारेस्ट और मध्य एशिया के पर्वतों की रचना हुई। इस पर्वत को आरमोरिकन (Armorican), अप्लेशियन (Appalachian) या अल्टाइड (Altoid) नाम से भी पुकारते हैं। 6 करोड़ वर्ष पूर्व मध्यनूतन युग में प्रारम्भ हुए अल्पाइन पर्वतन के दौरान हिमालय, आलप्स, रॉकी इत्यादि पर्वत नवजीव महाकल्प में निर्मित हुए।

पर्वतों के प्रकार

पर्वतों की उत्पत्ति के आधार पर इन्हें निम्न चार प्रकार में बांटा गया है–

ज्वालामुखीय या संचयन पर्वत (Volcanic or Accumulation Type): ज्वालामुखी उद्गार से निकले हुए लावा तथा ज्वालामुखक्षिप्त पदार्थों के संचयन से इन पर्वतों का निर्माण होता है। ये शंकु आकार के ऊंचे टीले होते हैं। विसुवियस, एटना, मौनालोआ, किलिमन्जारो, कोटोपैक्सी व कास्केड इनके उदाहरण है।

गुम्बदाकार पर्वत (Dome Mountain): पृथ्वी की सतह के नीचे आग्नेय क्रिया में मैग्मा भूपर्पटी के ऊपरी भाग को अपने वेग व दबाव से ऊपर की ओर गुम्बद आकार में उठा देता है, ऐसे पर्वत निर्माण सामान्यतः कम ऊंचाई के होते हैं तथा इन्हें लैकोलिथी पर्वत भी कहते हैं। अमेरिका के दक्षिण उटाह, कोलोरेडो वियोनिंग तथा दक्षिणी डकोटा ऐसे पर्वतों के उदाहरण है।

अवशिष्ट पर्वत (Relict Mountain): भेददर्शी अपरदन के फलस्वरूप पठारों व अन्य ऊंचाई वाले क्षेत्रों में अप्रतिरोधी शैलों का तीव्रता से अपरदन हो जाता है व गहरी घाटियां बन जाती है परन्तु इसी क्षेत्र में प्रतिरोधी शैल कम अपरदन के कारण ऊंचे पर्वतों के रूप में निर्मित होते हैं तथा अवशिष्ट पर्वत कहलाते हैं। एरिजोना के ग्रेण्ड कैनियन, भारत में विन्ध्यन पर्वत तथा पश्चिम घाट के पर्वत इनके उदाहरण है (चित्र 2.9)।

विरूपणीय या विवर्तनिक पर्वत (Deformational or Tectonic Mountain): भूपर्पटी में विवर्तनिक हलचलों के कारण पृथ्वी पर अधिकांश निर्मित विशाल पर्वत मालाएं विवर्तनिक पर्वत कहलाते हैं, इनके निर्माण में वलन (fold) एवं भ्रंश (fault) का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। वलन के कारण वलित पर्वत का निर्माण होता है। इनके उदाहरण आल्प्स, हिमालय, रॉकी व एण्डीज इत्यादि हैं। वलन प्रक्रिया से पर्वत निर्माण के अलावा पटल विरूपण के फलस्वरूप शैल संस्तरों में विशाल भ्रंशन के कारण भूखण्ड विस्थापित हो जाते हैं तथा उत्खण्ड भ्रंशन (horst faulting) के कारण ऊपर उठे भाग पर्वत का निर्माण करते हैं जिन्हें भ्रंशोत्थ पर्वत कहते हैं। दो भ्रंशोत्थ पर्वतों के बीच का धंसा भाग द्रोणिका कहलाता हैं। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के दक्षिण आरेगान, पूर्वी कैलिफोर्निया में भ्रंशोत्थ पर्वतों के उदाहरण है (चित्र 2.10)।

पर्वतों की उत्पत्ति

पर्वत निर्माण के संबंध में दो प्रकार की विचारधाराएं है। संकुचन विचार के समर्थक डाना, कोबर, स्वेस व चेम्बरलिन तथा महाद्वीपीय प्रवाह विचारधारा के समर्थक डेली, वेगनर, होम्स व जोली है।

वलित पर्वतों के निर्माण प्रक्रिया में छिछले समुद्री अवसादों के भूअभिनति में जमाव (हजारों मीटर की मोटाई तक) के कारण इसके तल पर बढते दबाव के फलस्वरूप अवतलन प्रक्रिया तथा क्रमशः भूअभिनति के दोनों किनारों के समीप हो आने से अवसादों के विरूद्ध दिशाओं में विवर्तनिक बल प्रयुक्त होते हैं। फलतः स्तरीत अवसादों का वलित होने के साथ–साथ उत्थान भी होता है और वलन, भ्रंशन एवं क्षेपण की क्रियाओं से वलित पर्वतों की उत्पत्ति होती है। इस प्रक्रिया के साथ भूसंकुचन भी होता है। साथ ही अपरदन की प्रक्रिया भी प्रारंभ हो जाती है व क्रमागत

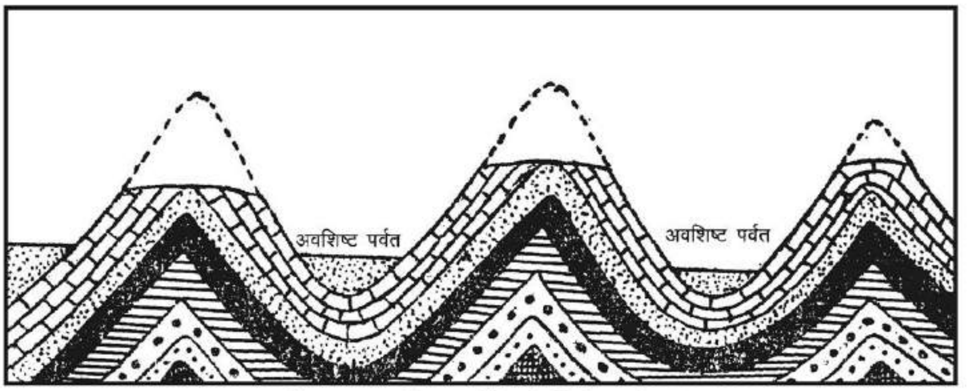

चित्र–2.9 अवशिष्ट पर्वतों की निर्माण प्रक्रिया

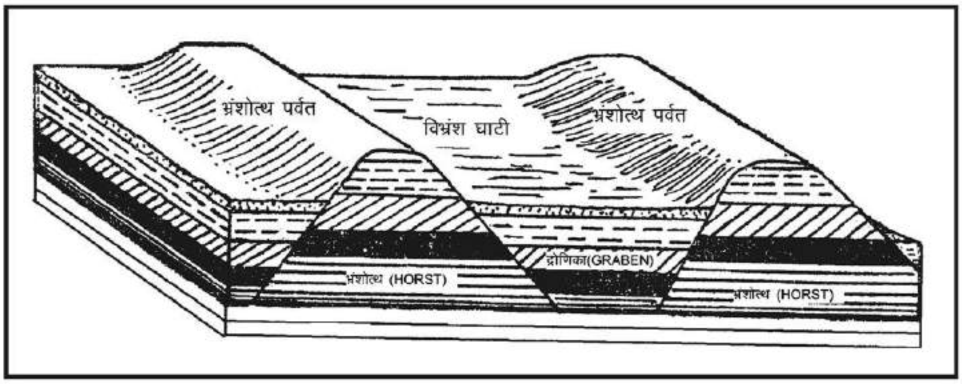

चित्र–2.10 भ्रंशोत्थ पर्वतों की निर्माण प्रक्रिया

अपरदन से पूर्व निर्मित पर्वतों का स्वरूप बदलता रहता है तथा अपरदित पदार्थों का समुद्र की कम गहराई में निक्षेपण होता है। लगातार अपरदन से पुराने पर्वत सम्पूर्ण अपरदित हो जाते है वहीं दूसरी ओर तटीय भू अभिनति में लगातार अवसादों के निक्षेपण से पुनः पर्वतों की उत्पत्ति का प्रक्रम क्रियान्वित होता है तथा इस तरह पर्वत रचना का चक्र निरन्तर चलता रहता है (चित्र 2.11)।

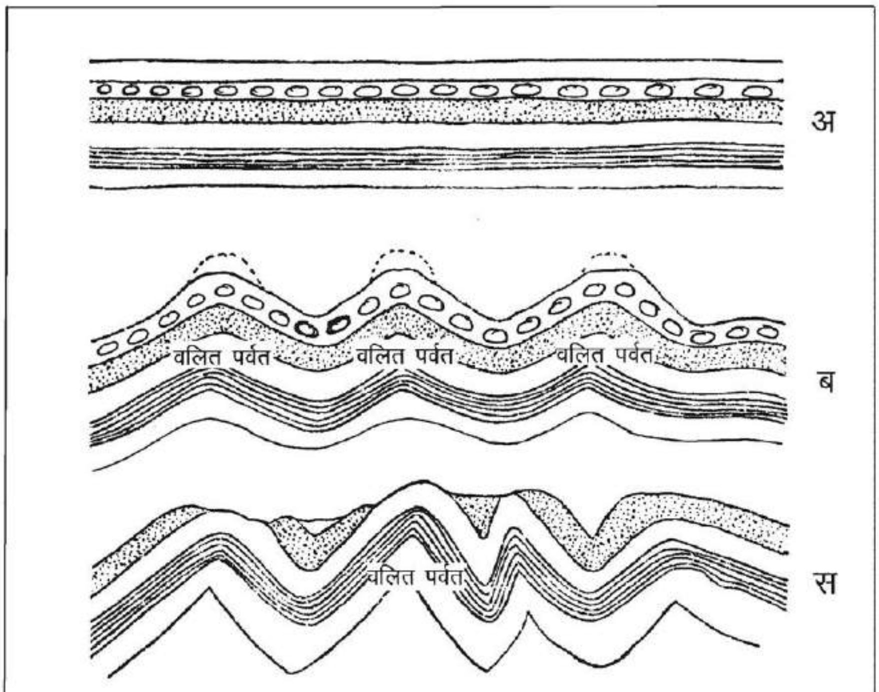

चित्र–2.11 वलित पर्वतों की निर्माण प्रक्रिया

पर्वतों की उत्पत्ति को समझाने हेतु निम्नलिखित परिकल्पनाएं प्रस्तुत की गई है–

1. कोबर की भूअभिनतीय पर्वतन परिकल्पना
2. जैफ्रे की तापीय संकुचन परिकल्पना
3. डेली की महाद्वीपीय सर्पण परिकल्पना
4. होम्स की संवहन धारा परिकल्पना
5. जॉली की तापीय चक्र परिकल्पना
6. महाद्वीपीय विस्थापन परिकल्पना

कोबर की भूअभिनतीय पर्वतन परिकल्पना– कोबर के अनुसार पृथ्वी की उत्पत्ति के बाद वह शीतल हो रही है। कोबर की परिकल्पना का आधार दृढ़ भूमि या पठार का सम्बन्ध गतिमान क्षेत्र या भूअभिनति से है। कोबर के अनुसार वलित पर्वत निर्मित करने वाले अवसादों का निक्षेपण भूअभिनतियों में हुआ। भूअभिनतियों में अवसादों के निक्षेपण होने के पश्चात इन पर दोनों ओर से दबाव पड़ने के कारण संपीडित बल क्रियाशील रहे। अग्र भूमि अर्थात दोनों पार्श्वों से बल लगने के फलस्वरूप अवसाद संदलित होकर वलित हो गए। वलन के कारण अग्रभूमि के सीमान्त क्षेत्र पर सीमान्त पर्वत श्रेणियां निर्मित हो गई। तीव्र संपीडित बल क्रियाशील होने पर दोनों अग्रभूमियां एक दूसरे के निकट आ गई तथा दोनों सीमान्त श्रेणियों में जटिल वलन संरचनाओं का निर्माण हुआ। इसके विपरीत सुयेस ने बताया कि एक अग्रभूमि केवल एक पार्श्व से ही अवसादों के वलित होने से बनी तथा इस अग्रभूमि के सामने भूअभिनति पर दबाव पड़ने के कारण वलित पर्वतों की उत्पत्ति हुई (चित्र 2.12)।

कोबर की परिकल्पना के सिद्धांत अनुसार हिमालय पर्वत की उत्पत्ति दक्षिण डेक्कन पठार व उत्तर में तिब्बत के पठार रूपी दृढ़ भूमियों का इनके बीच स्थित टेथिस सागर में निक्षेपित अवसादों पर दबाव क्रियाशील होने के फलस्वरूप हुई । निक्षेपित अवसाद वलित हुए तथा इनके उत्थान से हिमालय पर्वत की उत्पत्ति हुई तथा हिमालय के सामने विशाल सिंधु – गंगा के मैदान निर्मित हुए (चित्र 2.13)।

जैफ्रे की तापीय संकुचन परिकल्पना– जैफ्रे के अनुसार पृथ्वी विभिन्न संघटन के संकेन्द्री स्तरों से बनी है जो अलग–अलग मात्रा में शीतल हुए। भूसतह से 700 किलोमीटर की गहराई तक प्रत्येक स्तर अपने नीचे वाले स्तर से अधिक ठंडे हुए परन्तु इसके नीचे अर्थात 700 किलोमीटर से पृथ्वी के केन्द्र तक तापमान में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। स्तर ठंडे होने पर सिकुड़ते हैं। बाह्य स्तर के नीचे स्थित स्तर के ठंडे होने पर संकुचन तथा बाह्य स्तर के अधिक आयतन के फलस्वरूप बाह्य पर्पटी पर संपीडन से वह संदलित हो जाती है। शैलों में संकुचन के कारण संपीडन तब तक होता है जब तक कि उसमें आमोटन तथा वलन नहीं हो जाता। इस परिकल्पना के सिद्धांत से पृथ्वी के इतिहास में हुए 5 पर्वतन काल पूरी तरह नहीं समझाये जा सकते हैं। इस सिद्धांत के अनुसार छोटे छोटे वलन तो निर्मित हो सकते हैं परन्तु बड़े वलित पर्वत निर्मित नहीं हो सकते।

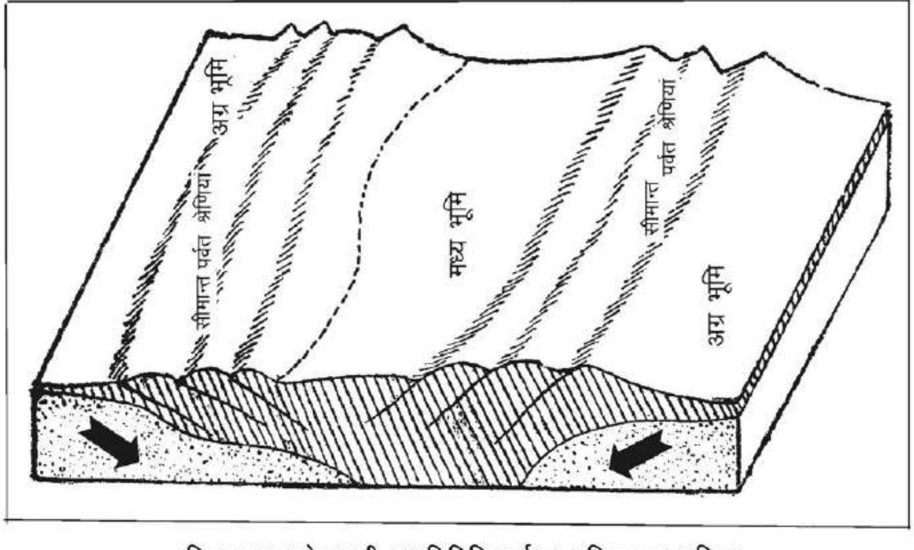

चित्र–2.12 कोबर की भूअभिनिति पर्वतन परिकल्पना प्रक्रिया

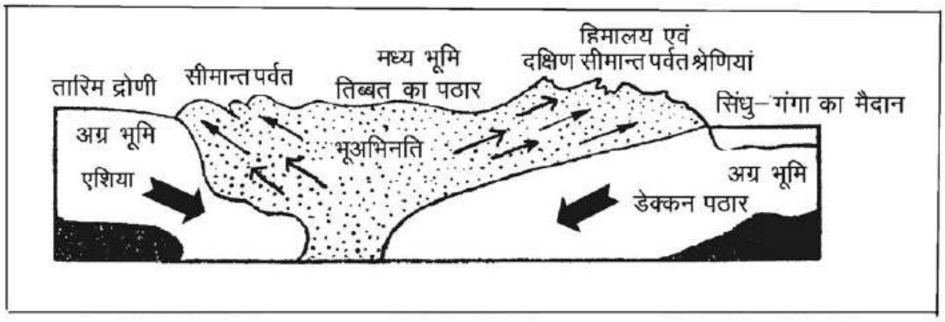

चित्र–2.13 कोबर की भूअभिनिति पर्वतन परिकल्पना अनुसार हिमालय पर्वत की उत्पत्ति

डेली की महाद्वीपीय सर्पण परिकल्पना– डेली की परिकल्पना के अनुसार गुरुत्वाकर्षण के कारण महाद्वीपीय भाग नीचे की ओर खिसक गये। शीतलन की दर में विभिन्न स्तरों में भिन्न–भिन्न होने के फलस्वरूप संकुचन व आयतन परिवर्तन के कारण बाह्य भूपर्पटी आंतरिक स्तरों में आसंजित नहीं हो पाई। बाह्य पर्पटी अपने ऊपर महासागर के जल व भूअभिनति में जमा हुए अवसाद के भार के कारण निपतित हो गई। इन क्षेत्रों में नीचे की ओर लगने वाले दबाव के कारण महाद्वीपों में पार्श्विक दबाव निर्मित हुआ। ये पार्श्विक दबाव, महाद्वीपों को स्थायित्व देने में सहायक थे जिसके कारण अधिक चपटे गुम्बदों का निर्माण हुआ। गुम्बदों की आकार वृद्धि व भूअभिनति में उपस्थित अवसाद पर बढ़ते दबाव के कारण भूअभिनति विभंजित हो गई। गुम्बद का अधिकांश भाग समाप्त हो गया व उसमें अधिक शक्ति का संपीडित संचलन निर्मित हुआ जिसके परिणामस्वरूप महाद्वीप की आकृति के बड़े भूखण्ड का भूअभिनति की ओर धीरे–धीरे सर्पण हुआ। इसके कारण भूअभिनति के अवसाद दोनों ओर से दबाव के कारण वलित हो गये। इस प्रकार वलित पर्वत श्रेणी के निर्माण की यह प्रथम अवस्था है।

डेली के मतानुसार अधः स्तर गर्म कांचाभ बेसाल्ट का है तथा बाह्य भूपर्पटी की अपेक्षा कम घना है। भूपर्पटी के विभंजित होने के बाद भूपर्पटी का वह भाग जो नीचे की ओर खिसका, टूटकर अधः स्तर में डूब गया। भूपर्पटी के टूटने से अधः स्तर का पदार्थ अभिनति के अन्दर प्रवेश कर गया तथा इसके कारण महाद्वीप के टूटे हुए भाग का आगे सर्पण आसान हो गया। सर्पण की अधिकता पर भूअभिनति के अवसादों पर दोनों ओर से अधिक दबाव पड़ेगा तथा अधिक वलित पर्वतों का निर्माण होगा (चित्र 2.14)।

होम्स की संवहन धारा परिकल्पना– यह परिकल्पना रेडियोधर्मिता (विघटन नाभिकता) पर आधारित है। भूपर्पटी में रेडियोधर्मी तत्व मौजूद है जो विघटित होकर ताप का विसर्जन करते हैं। शैलों में इनकी मात्रा में भिन्न–भिन्न होने के कारण ताप विसर्जन में भी विभिन्नता होती है तथा तापान्तर के कारण अधः

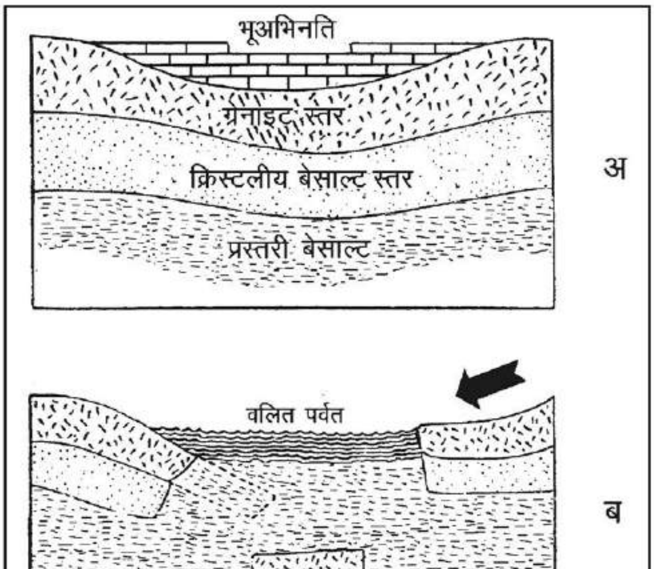

चित्र–2.14 डेली की महाद्वीपीय सर्पण परिकल्पना प्रक्रिया

स्तर में संवहन धाराएं निर्मित होती है, जो अधिक ताप से कम ताप की प्रवाहित होती है। दो आरोही संवहन धाराएं आपस में मिलती है एवं एक दूसरे के विरूद्ध दिशाओं में घूम जाती है तब भूपर्पटी पर तनाव पैदा होता है जिससे पर्पटी खण्डित होकर एक दूसरे से दूर चले जाते है। इसी प्रकार दो अवरोधी धाराएं मिलकर फिर नीचे की ओर घूम जाती है तब भूपर्पटी पर सम्पीडन बल प्रयुक्त होता है एवं उस भाग पर अधोमुखी कर्षण प्रतिपादित होता है। प्रवाह धारा चक्र के प्रथम सोपान में धाराओं के धीरे–धीरे प्रवाहित होने से अधोमुखी कर्षण के कारण भूअभिनति का निर्माण व उसमें अवसादों का निक्षेपण होता है। द्वितीय सोपान में संवहन धाराओं की गति में वृद्धि होने से संपीडन बल के कारण अवसादों का वलन होता है, इसके साथ ही आग्नेय सक्रियता भी होती है। प्रवाह धारा चक्र के तीसरे सोपान में वलित अवसादों का पर्वत श्रेणी में उत्थान होता है तथा चौथे सोपान में धाराओं की समाप्ति के साथ ही पर्वतन चक्र समाप्त हो जाता है (चित्र 2.15)।

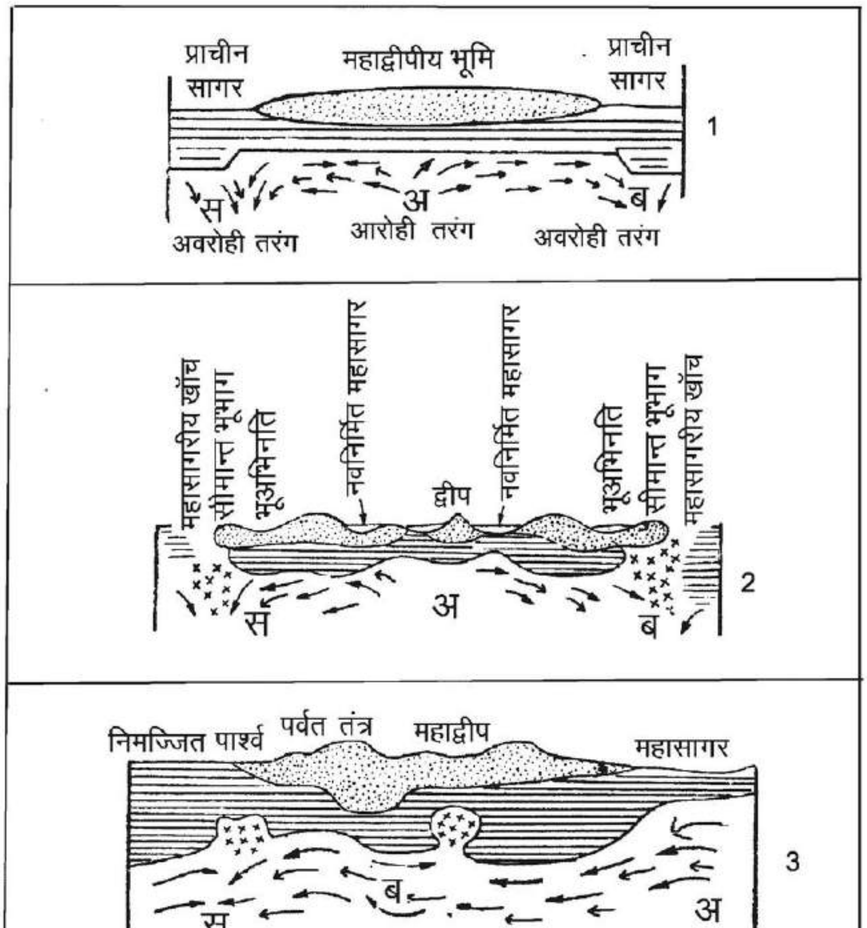

चित्र–2.15 होम्स की संवहन धारा परिकल्पना प्रक्रिया

जॉली की तापीय चक्र परिकल्पना– इस परिकल्पना में महाद्वीप के 'सिएल' व महासागर के 'सीमै' में रेडियोएक्टिव तत्वों के विघटन से ताप उत्सर्जन के साथ इन दोनों के पिघलने व ठोस होने की प्रक्रिया के साथ पर्वत निर्माण को समझाने का प्रयास किया गया। 'सिएल' अपने से नीचे स्थित स्तर 'सीमै' पर तैरता है तथा इनके गलनांक क्रमशः 1050 तथा 1150 डिग्री सेंटीग्रेड होता है। 'सीमै' के द्रवित होते ही सिएल इसमें डूबने लगता है जिसके फलस्वरूप महासागर थल की ओर आ जाएगा और महाद्वीप सीमान्त का महासागर द्वारा अतिक्रमण होगा तथा इस प्रकार भूअभिनति निर्मित होगी व इसमें निक्षेपण होने लगेगा। कुछ समयावधि उपरान्त 'सीमै' तापक्रम में कमी होने पर पुनः ठोस हो जाएगा तथा 'सिएल' ऊंचा उठकर पुनः पूर्व स्थिति में आ जाएगा जिसके फलस्वरूप महाद्वीप के सीमान्त से महासागर पीछे चला जाएगा व समुद्र का प्रतिक्रमण हो जाएगा। 'सीमै' के ठण्डे होने से पुनः ठोस रूप में परिवर्तन से उसमें संकुचन होता है तथा संकुचन से संपीडन बल निर्मित होते हैं। यह बल भूअभिनति में निक्षेपित अवसादों पर दो विपरित दिशाओं पर कार्यरत होने से उनमें वलन कर देता है तथा इस प्रकार वलित पर्वतों का निर्माण हो जाता है। इस पूरे प्रक्रम की 30 हजार वर्ष के पश्चात पुनरावृति होती है अतः पर्वतों का निर्माण भी इसी अवधि बाद पुनरावृत्त होना चाहिए परन्तु यथार्थ में पर्वत रचना अविरत प्रक्रम हैं।

महाद्वीपीय विस्थापन परिकल्पना– महाद्वीपीय विस्थापन के सिद्धांत के आधार पर पर्वतों की उत्पत्ति को समझाने का प्रयास किया गया। इसके अनुसार प्रारम्भ में पृथ्वी पर एक ही विस्तृत भूभाग था जो कालान्तर में कई भागों में खण्डित होकर विस्थापित हुआ तथा ये खण्डित भूभाग वर्तमान भूभाग के रूप में मौजूद है। इन भूभागों के बीच में स्थित भूअभिनतियों में अवसादन जारी रहा। भूखण्डों के खिसकने से भूअभिनतियों में निक्षेपित हो रहे अवसादों पर दबाव पड़ने से संपीडन बल के कारण वे वलित हो गए तथा इस प्रकार वलित पर्वतों की उत्पत्ति हुई। इस आधार पर भारत के उत्तर पूर्व की ओर विस्थापन होने से टैथिस महासागर में निक्षेपित अवसादों के वलित होने से हिमालय पर्वत की उत्पत्ति हुई है।

भारत के भू आकृतिक अवयव

भारत की भू आकृतिक संरचनाओं में विविधता पाई जाती है। भारत के उत्तर में नवीन गगनचुम्बी पर्वतमालाएं, मध्य में विशाल समतल मैदान तथा दक्षिण में अति प्राचीन कठोर शैलों के पठार है तथा पूर्व व पश्चिम में तटीय मैदान और द्वीप समूह है। भारत के कुल क्षेत्रफल का 10.7 फीसदी भाग पर्वतीय, 18.6 फीसदी भाग पहाड़ी, 27.7 फीसदी भाग पठारी तथा शेष 43 फीसदी भाग मैदानी है।

प्राकृतिक संरचना के अध्ययन हेतु भारतीय उप महाद्वीप (भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका व म्यंमार इत्यादि देश सहित) के प्राकृतिक रचनाओं का वर्णन प्रस्तुत किया गया है। प्राकृतिक संरचना के आधार पर भारतीय उप महाद्वीप को तीन भागों में वर्गीकृत किया गया है–

1. प्रायद्वीपेतर भाग
2. सिंधु–गंगा का मैदानी भाग
3. प्रायद्वीपीय भाग

प्रायद्वीपेतर भाग

प्रायद्वीपेतर भाग में हिमालय पर्वतमाला तथा बर्मा (म्यंमार) एवं बलूचिस्तान के चाप सम्मिलित है। इनका निर्माण तृतीय महाकल्प में टेथिस भू अभिनति के निक्षेपों के पर्वतन क्रिया के फलस्वरूप हुआ। प्रायद्वीपेतर भाग में हिमालय पर्वत और इसके पूर्वी व पश्चिमोत्तर भाग में विस्तृत पर्वतमालाएं सम्मिलित हैं।

हिमालय पर्वतमाला पूर्व से पश्चिम की ओर फैली हुई है तथा अनेक समानान्तर पर्वत श्रेणियों से निर्मित है। हिमालय चार प्रमुख श्रेणियों से बना है। शिवालिक पर्वतमालाएं दक्षिण भाग में मैदानी क्षेत्र से लगी हुई है तथा 8 से 50 किलोमीटर तक चौड़ी है एवं इनकी ऊंचाई 600 से 1800 मीटर तक है। हिमाचल श्रेणियां शिवालिक श्रेणी के उत्तर में स्थित है तथा 65 से 80 किलोमीटर तक चौड़ी है। इनमें पीर पंजाल, धोलाधर इत्यादि प्रमुख है। इन श्रेणियों की ऊंचाई 3750 से 4500 मीटर तक है। हिमाद्रि हिमाचल के उत्तर में मैदानी भाग से लगभग 140 किलोमीटर दूर पश्चिम में नंगा पर्वत से पूर्व में नामचा वर्वा तक फैला है। 6000 मीटर से ज्यादा ऊंचाई वाले इस भाग की चौड़ाई 130 से 150 किलोमीटर तक है। इसकी चोटियां हिम आच्छादित है। इसके मध्य भाग में ग्रेनाइटी शैल तथा दोनों ओर कायान्तरित शैलों की पट्टियां है। हिमाद्री का दक्षिणी ढाल ज्यादा है वहीं उत्तर की ओर हल्के ढाल के बाद समानान्तर घाटियां है, जिनमें से प्रमुख नदियां बहती है। तिब्बती हिमालय हिमाद्री के उत्तर में स्थित है तथा दक्षिण एवं मध्य एशिया के जल विभाजक का कार्य करता है। इसकी चोटियां 6000 मीटर से अधिक ऊंचाई की है। इस भाग की जान्सकर, लद्दाख, कैलाश पर्वत, काराकोरम पर्वतमालाएं प्रमुख है। इस भाग में अनेक हिमनद पाए जाते हैं तथा हिमालय क्षेत्र की अनेक प्रमुख नदियां इससे निकलकर दक्षिण की ओर जाती है। विश्व की 8000 मीटर से ज्यादा ऊंची 14 चोटियों में से 12 निम्न चोटियां हिमालय क्षेत्र में स्थित है–

1. माउण्ट एवरेस्ट (8848 मीटर)
2. के–2 (8611 मीटर)
3. कंचनजंगा (8598 मीटर)
4. मकालू (8481 मीटर)

5. धोलागिरी (8172 मीटर)
6. मनासलू (8156 मीटर)
7. चो. आउ (8153 मीटर)
8. अन्नपूर्णा (8078 मीटर)
9. हिडेन पीक (8068 मीटर)
10. ब्राड पीक (8047 मीटर)
11. गशेब्रम II (8035 मीटर)
12. गोसाईनाथ (8013 मीटर)

हिमालय पर्वतमाला का भौगोलिक विस्तार पूर्व में उत्तरी असम से ब्रह्मपुत्र के विशाल दोहरे मोड़ से लेकर पश्चिम में सिंधु नदी के मोड़ तक है।

बलूचिस्तान चाप कश्मीर से हजारा, पश्चिमोत्तर सीमा प्रांत, सिन्ध व बलूचिस्तान से होता हुआ पश्चिम में ईरान की ओर अनेक पर्वतमालाओं से मिलकर बनी एक मिश्रित चाप है। इसमें चार प्रमुख पर्वत श्रृंखलाएं हैं–

1. पोत्वार का पठार और नमक के पर्वत
2. शेख बुदीन की पहाडियां
3. सुलेमान पर्वत
4. लाखी, किरथर व मरी की पहाड़ियां

बर्मा (म्यंमार) की चाप भारत के पूर्व में स्थित है। यह दक्षिण–पश्चिम चीन से प्रारंभ होकर भारत, म्यंमार, पाकिस्तान सीमा रेखा से अंडमान–निकोबार द्वीप समूह होते हुए इण्डोनेशिया द्वीप समूह की ओर गई हुई है।

सिंधु–गंगा का मैदानी भाग

हिमालय और प्रायद्वीपीय भारत के बीच स्थित विशाल गर्त में हिमालय से आने वाली नदियों से लाए अवसादों के निक्षेप से बना सिंधु–गंगा का विशाल मैदानी भाग चतुर्थ महाकल्प में निर्मित हुआ है। पूर्व में गंगा–ब्रह्मपुत्र डेल्टा की दक्षिणी सीमा से लेकर पश्चिम में सिंधु डेल्टा के अंत तक 3400 किलोमीटर क्षेत्र में फैलाव लिए यह मैदानी भाग 150 से 500 किलोमीटर तक चौड़ा है। पंजाब में इसकी चौड़ाई अधिकतम 550 किलोमीटर तथा असम में घटती हुई 90–100 किलोमीटर तक है। सिंधु मैदान के उत्तर पूर्व में थार का रेगिस्तान राजस्थान के उत्तर पश्चिम भाग व हरियाणा क्षेत्र में फैला हुआ है। सिंधु–गंगा मैदानी भाग की औसत ऊंचाई 150 मीटर है। गंगा–ब्रह्मपुत्र तथा सिंधु नदियों द्वारा निक्षेपित अवसादों से यह मैदानी भाग वर्तमान से 11 हजार वर्ष पूर्व निक्षेपण से बना है। सिंधु–गंगा का मैदानी भाग साढे. आठ लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैलाव लिये हुए है तथा इनमें बजरी, रेत तथा मिट्टी पायी जाती है। मुख्य गंगा के मैदान में ये प्राचीन जलोढ़ (भांगर या बांगर), नूतन जलोढ़ (खादर) तथा भाबर के रूप में तथा सिंधु मैदान में खादर के रूप में वर्गीकृत की गई है। भाबर के दक्षिण में तराई प्रदेश है, जहां विलुप्त नदियां पुनः प्रकट होती हैं ।

प्रायद्वीपीय भाग

त्रिकोणाकार आकार का प्रायद्वीपीय भाग उत्तर से दक्षिण की ओर करीब 2200 किलोमीटर तथा पूर्व से पश्चिम की तरफ करीब 1400 किलोमीटर तक फैलाव लिए हुए है। त्रिकोण का शिखर दक्षिण दिशा में कन्याकुमारी को इंगित करता है। प्रायद्वीपीय भाग एक प्राचीन पठार है तथा इसके पर्वत पूर्ववर्ती पर्वतों के अवशेष है। उत्तर पश्चिम में अरावली पर्वत श्रृंखला 800 किलोमीटर तक फैली हुई है, यह दो अरब वर्षो से पुरानी विभिन्न शैलों से निर्मित है, जिसमें सर्वाधिक ऊँची चोटी माउण्ट आबू का गुरू शिखर (1727 मीटर) है। उत्तर पूर्व–दक्षिण पश्चिम दिशा में अनुदिश अरावली पूर्व में मुड़ती है तथा सतपुड़ा पर्वतमाला के रूप में बढ़ी हुई है जो 900 से 1000 मीटर की ऊंचाई वाली सात पहाड़ियों से निर्मित है। पूर्वी भारत में यह 'मेघालय गिरीपिंड' (मिसिफ) द्वारा प्रदर्शित है जिसका शिखर शिलांग (1963 मीटर) है। प्रायद्वीप का पश्चिमी किनारे पर 1600 किलोमीटर लम्बी सह्याद्री पर्वतमाला, उत्तर में तापी घाटी से लेकर दक्षिण में कन्याकुमारी तक विस्तारित है। सह्याद्री उत्तर, मध्य व दक्षिण तीन खण्डों में पहचानी जाती है। उत्तर सह्याद्री में कालसुबाई (1646 मीटर) तथा महाबालेश्वर (1569 मीटर) प्रमुख शिखर हैं। महाराष्ट्र में स्थित ये पर्वत करीब 6 करोड़ वर्ष पुराने बेसाल्टी लावा से निर्मित है। मध्य सह्याद्री के पर्वत कर्नाटक में 250–300 करोड़ वर्ष पुराने है तथा इनमें ग्रेनाइट, नाइस तथा कायांतरित प्रमुख शैलें हैं। इनमें नीलगिरी (2637 मीटर), कुद्रेमुख (1892 मीटर) तथा पुष्पगिरी (1714 मीटर) प्रमुख शिखर है। दक्षिण सह्याद्री 55 करोड़ वर्ष पुरानी चार्नोकाइट व खोण्डालाइट से निर्मित है जिनमें अन्नाइमलाई (2695 मीटर) व ईलाइमलाई (2670 मीटर) प्रमुख शिखर है।

प्रायद्वीप का मध्य भाग पठार (600–900 मीटर) से मुख्यतः निर्मित है। उत्तर पश्चिम में मालवा पठार (500–600 मीटर) 6 करोड़ वर्ष पूर्व लावा निर्मित है। उत्तर पूर्व में बुन्देलखण्ड उच्च भूमि (300–600 मीटर) आद्य महाकल्प की ग्रेनाइट व नाइस से निर्मित है। विन्ध्यांचल पठार प्राग्जीवी अवसादी शैलों से निर्मित है, इसमें कैमूर पर्वतमाला (760–1220 मीटर) प्रमुख है। विन्ध्यन के दक्षिण में 6 करोड़ वर्ष पुरानी बेसाल्टी लावा से निर्मित डेक्कन ट्रेप्स के पठार हैं। मैसूर पठार (800–900 मीटर) आद्य महाकल्प की ग्रेनाइट, नाइस तथा कायान्तरित शैलों से निर्मित है।

प्रायद्वीप के पश्चिम किनारे पर पश्चिम घाट और पूर्वी किनारे पर पूर्वी घाट की पहाड़ियां है। पश्चिमी घाट पूर्वी घाट की अपेक्षा अधिक ऊँचा हैं। पश्चिम तथा पूर्वी किनारों पर

उपजाऊ तटीय मैदान है। पश्चिम तटीय मैदान संकीर्ण है तथा इसका उत्तरी भाग कोंकण तट तथा दक्षिणी भाग मालाबार तट कहलाता है। पूर्वी तटीय मैदान अपेक्षाकृत चौड़ा है और उत्तर में उड़ीसा से दक्षिण में कुमारी अंतरीप तक फैला हुआ है। महानदी, गोदावरी, कृष्णा व कावेरी नदियां जहां डेल्टा बनाती है वहां यह मैदान अधिक चौड़ा है। मैदान का उत्तरी भाग उत्तरी सरकार तट कहलाता है।

भारत के द्वीपीय भागों में लक्षद्वीप तथा अंडमान–निकोबार द्वीप समूह है। ये समुद्र में प्रक्षिप्त हिस्सा माने जाते हैं। अंडमान–निकोबार द्वीप पर ज्वालामुखी क्रिया के अवशेष भी दिखाई पड़ते है। इसके पश्चिम में बैरन द्वीप भारत का एकमात्र सक्रिय ज्वालामुखी है (चित्र 2.16)।

भारतीय उप महाद्वीप के तीनों प्राकृतिक भागों में नदियां बहती है। हिमालय क्षेत्र में हिमनद पाये जाते हैं। असम में

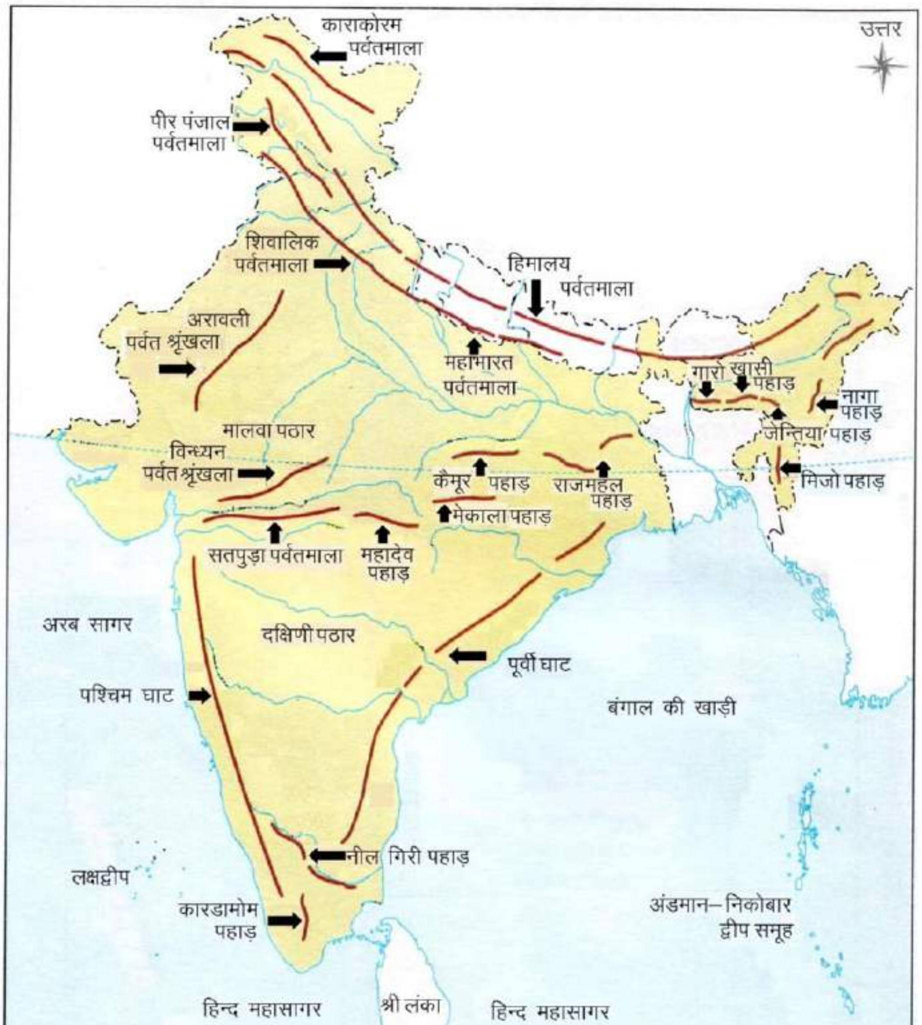

चित्र–2.16 भारत की मुख्य पर्वतमालाओं का मानचित्रण

हिमरेखा 4400 मीटर व कश्मीर में 5100 से 5800 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है। असम से कश्मीर तक करीब 40000 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में हिम क्षेत्र विस्तृत है। हिमाद्री तथा काराकोरम पर्वतमालाओं में हिम नदियां विकसित हुई है।

प्रायद्वीपेतर भाग में हजारा से असम के बीच में हिमालय से 20 प्रमुख नदियां निकलती है जो सिंधु, गंगा तथा ब्रह्मपुत्र प्रवाह का निर्माण करती है। सिंधु नदी प्रवाह में सिंधु के अलावा झेलम, चिनाब, रावी, व्यास तथा सतलज नदियां पूर्व की ओर से तथा काबुल व कुर्रम नदियां पश्चिम की ओर से निकलती है। गंगा नदी गंगोत्री से निकलती है तथा रामगंगा, काली करनाली, गण्डक, कोसी (उत्तर दिशा से) इसकी सहायक नदियां है। यमुना गंगा से पश्चिम में यमुनोत्री से निकलती है तथा इसी के समानान्तर बहती हुई प्रयाग में आकर गंगा से मिल जाती है। विन्ध्यांचल से चम्बल, सिंधु, बेतवा, केन, टोंस (तमसा) तथा सोन नदियां निकलकर इसी प्रवाह तंत्र में मिल जाती है। ब्रह्मपुत्र नदी मानसरोवर से निकलती है तथा इसकी सहायक नदियां मनास, मरेली, सुवर्णश्री व लोहित इत्यादि है। प्रायद्वीपीय भाग में दामोदर, स्वर्णरेखा, ब्रह्मी, महानदी, गोदावरी, कृष्णा, पन्नेर, कावेरी तथा ताम्रपर्णी पूर्व

चित्र–2.17 भारत की मुख्य नदियों का मानचित्रण

की ओर बहने वाली तथा ताप्ती व नर्मदा पश्चिम की ओर बहने वाली नदियां हैं। बनास व लूनी नदियां अरावली पर्वतमाला से निकल कर अरब सागर में मिलती है। पश्चिम की ओर बहने वाली नदियां डेल्टा नहीं बनाती हैं। प्रायद्वीपीय भाग की नदियों का प्रवाह पथ प्रायद्वीपेतर भाग की की नदियों के प्रवाह पथ की तुलना में स्थिर रहे हैं। प्रायद्वीपेतर नदियों के प्रवाह पथ में अनेक परिवर्तन हुए जिनका प्रभाव मानव सभ्यता के विकास व विस्तार पर पड़ा (चित्र 2.17)।

नदियों के अलावा हिमालय व तिब्बत क्षेत्र में झीलें हैं। मानसरोवर, रक्षताल, यमद्रोक, वूलर, डल, भीमताल, नैनीताल, चन्द्रताल इत्यादि प्रमुख झीलें है। राजस्थान में सांभर, डीडवाना, पचपदरा, लूणकरणसर इत्यादि नमकीन झीलें हैं। दक्षिण भारत में चैन्नई के निकट पुलिकट झील, उड़ीसा में चिल्का झील प्रमुख है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

- सौर मंडल 'सूर्य केन्द्रीय' है जिसमें सूर्य एक विशाल तारा है तथा इसके चारो ओर आठ ग्रह, बौने ग्रह, प्राकृतिक उपग्रह, क्षुद्र ग्रह, उल्काएं, धूमकेतू इत्यादि परिक्रमा करते हैं।
- सूर्य से पृथ्वी की औसत दूरी लगभग 15 करोड़ किलोमीटर है जिसे एक खगोलीय एकक कहते हैं।
- पृथ्वी की उत्पत्ति को समझने के लिए एक जनकीय तथा द्विजनकीय परिकल्पनाओं का सहारा लिया गया है।
- पृथ्वी की आंतरिक संरचना को भूपर्पटी, प्रावार तथा क्रोड में बांटा गया है। भूपर्पटी तथा प्रावार के मध्य मोहरोविसिक असांतत्य तल तथा प्रावार एवं क्रोड के मध्य गुटेनबर्ग व विचर्ट असांतत्य तल पाये जाते हैं। पृथ्वी की आंतरिक संरचना की जानकारी में भूकम्पीय तंरगों का अध्ययन महत्वपूर्ण है।
- पृथ्वी की आकृति गोलाभ सदृश्य मानी गई है तथा इसका आकार "जीऑयड" कहलाता है।
- पृथ्वी की आयु 4 अरब 60 करोड़ वर्ष आंकी गई है। आयु गणना में रेडियोएक्टिव विधि से पृथ्वी की सही आयु का पता लगाया गया है।
- पृथ्वी पर सात महाद्वीप यथा एशिया, अफ्रीका, उत्तरी अमेरिका, दक्षिण अमेरिका, अंटार्कटिका, यूरोप तथा ऑस्ट्रेलिया है।
- पृथ्वी पर पाँच महासागर यथा प्रशांत महासागर, अंध महासागर, हिन्द महासागर, दक्षिण ध्रुवीय महासागर तथा उत्तर ध्रुवीय महासागर है।
- पर्वतों का वर्गीकरण भौगोलिक व्यवस्था व विस्तार, आयु के विचार तथा उत्पत्ति के विचार के आधार पर किया जाता है।
- पर्वतों की उत्पत्ति में भूअभिनतियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। पर्वतों की उत्पत्ति समझाने हेतु विभिन्न भूअभिनति, ताप, संकुचन, महाद्वीपीय सर्पण, संवहन, धारा, तापीय चक्र तथा महाद्वीपीय विस्थापन आधारित भिन्न–भिन्न परिकल्पनाओं की मदद ली गई है।
- भारतीय उप महाद्वीप को प्राकृतिक संरचना के आधार पर तीन भागों यथा प्रायद्वीपेतर भाग, सिंधु–गंगा का मैदानी भाग तथा प्रायद्वीपीय भाग में बांटा गया है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. सूर्य का व्यास पृथ्वी की तुलना में कितना गुना अधिक है?
   (अ) 58 गुना (ब) 109 गुना
   (स) 216 गुना (द) 303 गुना
2. नवतारा परिकल्पना किसने दी?
   (अ) फ्रेड हायल (ब) रॅासगन
   (स) चेम्बरलीन (द) बफन
3. पृथ्वी की भीतरी क्रोड किस गहराई से शुरू होती है?
   (अ) 1500 किलोमीटर (ब) 590 किलोमीटर
   (स) 2900 किलोमीटर (द) 6370 किलोमीटर
4. सबसे बड़ा महाद्वीप व महासागर निम्न से है–
   (अ) एशिया व आस्ट्रेलिया
   (ब) अफ्रीका व हिन्द महासागर
   (स) यूरोप व अटलांटिक महासागर
   (द) एशिया व प्रशांत महासागर
5. पर्वत उत्पत्ति समझाने की महाद्वीपीय सर्पण परिकल्पना किसने दी?
   (अ) डेली (ब) होम्स
   (स) जॉली (द) जैफ्रे
6. माउण्ट आबू में गुरू शिखर की ऊंचाई निम्न में से कौनसी है?
   (अ) 546 मीटर (ब) 1727 मीटर
   (स) 2437 मीटर (द) 3786 मीटर

अति लघुत्तरात्मक प्रश्न (20 शब्दों में)

1. सौर मंडल में कितने ग्रह हैं?
2. मंगल के उपग्रहों की संख्या कितनी है?
3. पृथ्वी की उत्पत्ति के संबंध में कौनसी दो विचारधाराएं प्रचलन में है?
4. सौर ज्वाला क्या है?

5. पृथ्वी के बाह्य भाग को क्या कहते हैं?
6. भूकम्पीय तरंगें कितने प्रकार की होती है?
7. पृथ्वी का आकार किस प्रकार का है?
8. पृथ्वी की आयु बताइये।
9. पृथ्वी पर महाद्वीपों व महासागरों की संख्या बताइये।
10. पर्वत को परिभाषित कीजिए।
11. पहाड़ी किसे कहते हैं?
12. माउण्ट एवरेस्ट की ऊंचाई कितनी है?
13. "सीमै" व "सिएल" के गलनांक बताइये।
14. सतपुड़ा पर्वतमाला कितनी पहाड़ियों से बनी है?
15. असम में हिम रेखा की ऊंचाई क्या है?

लघुत्तरात्मक प्रश्न – (250 शब्दों में)

1. सूर्य से दूरी के आधार पर बढती दूरी के क्रम में आठ ग्रहों के नाम लिखिए।
2. उल्का व उल्का पिंड किसे कहते हैं?
3. धूमकेतू क्या है, इनके उदाहरण लिखिए।
4. सिफिड क्या है?
5. यूरेनियम–238 तथा रूबिडियम–87 की अर्द्ध आयु बताइये।
6. रेडियोएक्टिव विधि द्वारा पृथ्वी की आयु में प्रयुक्त सूत्र लिखिए।
7. महाद्वीप व महासागर को परिभाषित कीजिए।
8. भू अभिनति को परिभाषित कीजिए।
9. संवहन धाराओं पर लघु टिप्पणी लिखिए।
10. हिमालय की प्रमुख चार श्रेणियों के नाम बताइए।
11. हिमालय क्षेत्र की किन्ही पांच ऊंची चोटियों के नाम लिखिए।
12. सह्यादी पर्वतमाला पर लघु टिप्पणी लिखिए।
13. बलूचिस्तान चाप पर लघु टिप्पणी लिखिए।
14. हिमाद्री पर लघु टिप्पणी लिखिए।
15. प्रायद्वीपीय भाग की प्रमुख नदियों के नाम बताइए।

निबंधात्मक प्रश्न

1. सौर मंडल पर विस्तृत टिप्पणी लिखिए।
2. पृथ्वी की उत्पत्ति को समझाने वाली एकरूपतावादी परिकल्पनओं पर टिप्पणी लिखिए।
3. पृथ्वी की उत्पत्ति संबंधी प्रलयवादी परिकल्पनाओं पर टिप्पणी लिखिए।
4. पृथ्वी की आंतरिक संरचना का वर्णन कीजिए।
5. इसकी आयु ज्ञात करने की विधियों पर टिप्पणी लिखिए।
6. पर्वतों के वर्गीकरण व उत्पत्ति पर टिप्पणी लिखिए।
7. भारत के भू आकृतिक अवयव पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

उत्तरमाला: 1 (ब), 2. (अ), 3. (स), 4. (द), 5. (अ), 6. (ब)